शैक्षिक मंथन

(द्विभाषी मासिक)

शैक्षिक क्षेत्र की प्रतिनिधि पत्रिका

वर्ष : 9 अंक : 12 1 जुलाई, 2017

(आषाढ़-श्रावण, विक्रम संवत् 2074)

संस्थापक संरक्षक
स्व. मुकुन्द राव कुलकर्णी के.नरहरि

❖

परामर्श
डॉ. विमल प्रसाद अग्रवाल
जगदीश प्रसाद सिंघल

❖

सम्पादक
सन्तोष पाण्डेय

❖

सह सम्पादक
विष्णुप्रसाद चतुर्वेदी ❑ भरत शर्मा

❖

संपादक मंडल
प्रो. नन्दकिशोर पाण्डेय
डॉ. नाथू लाल सुमन
डॉ. एस.पी. सिंह
डॉ. ओमप्रकाश पारीक

❖

प्रबन्ध सम्पादक
महेन्द्र कपूर

❖

व्यवस्थापक
बजरंग प्रसाद मजेजी

प्रेषण प्रभारी
बसन्त जिन्दल ❑ नौरंग सहाय भारतीय
कार्यालय प्रभारी
आलोक चतुर्वेदी : 9782873467

प्रकाशकीय कार्यालय
82, पटेल कॉलोनी, सरदार पटेल मार्ग,
जयपुर (राज.) 302001
दूरभाष : 9414040403

दिल्ली ब्यूरो :
शैक्षिक महासंघ सदन, 606/13,
कृष्णा गली नं.9, मौजपुर, दिल्ली-110053
दूरभाष : 011-22914799

E-mail :
shaikshikmanthan@gmail.com
Visit us at :
www.shaikshikmanthan.com

एक प्रति 20/– वार्षिक शुल्क 200/–
आजीवन (दस वर्ष) 1500/-

पृष्ठ संयोजन : सागर कम्प्यूटर, जयपुर

शैक्षिक मंथन मासिक में
प्रकाशित सामग्री से संपादक मण्डल का
सहमत होना आवश्यक नहीं है।

गुरु चेतना का प्रवाह और साहित्य ❑ प्रो. नन्द किशोर पाण्डेय

14वीं से 17वीं शताब्दी तक गुरु को जो प्रतिष्ठा भारतीय साहित्य में मिली, वह अन्यत्र दुर्लभ है। शिष्यों और गुरुओं ने जाति बंधन को तोड़ा। कई शिष्यों ने कई गुरु बनाए। यह परम्परा पुराणों में भी है। सवर्ण का गुरु अवर्ण और अवर्ण का गुरु सवर्ण हो सकता है। ऐसे दर्जनों उदाहरण भक्ति साहित्य में उपलब्ध हैं। रामानुजाचार्य इस दृष्टि से क्रांतिकारी आचार्य थे। उनके गुरुओं में कांचिपूर्ण, महापूर्ण और गोष्ठिपूर्ण शूद्र थे। महापूर्ण से ही रामानुजाचार्य ने तमिल प्रबन्धमाला का अध्ययन किया था। संतों ने जिन ग्रंथों का संग्रह किया वे पोथियाँ भी गुरुपद को प्राप्त हुईं।

अनुक्रम

4.	गुरु, आचार्य या शिक्षक	– सन्तोष पाण्डेय
6.	गुरु का सानिध्य : समष्टि का कल्याण	– प्रो. मधुर मोहन रंगा
11.	वर्तमान परिदृश्य में गुरु शिष्य संबंध	– डॉ. ऋतु सारस्वत
13.	गुरु का महत्त्व	– डॉ. इन्दु बाला अग्रवाल
15.	गुरु बिनु भव निधि तरहि न कोई	– बजरंग प्रसाद मजेजी
17.	गुरुता का अहसास कराना होगा	– विष्णुप्रसाद चतुर्वेदी
19.	विद्या प्रदाता तारणहार गुरु	– डॉ. ओम प्रकाश पारीक
22.	गुरु का आश्रय – जीवन का आधार	– डॉ. रेखा भट्ट
26.	Guru Ruthe Nahin Thaur	– Prof. A. K. Gupta
28.	Bharatiya Guru Parampara	– Dr. TS Girishkumar
31.	New Pedagogical Approaches ...	– Prof. B.P. Sharma
39.	वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में बदलाव की आवश्यकता	– साकेन्द्र प्रताप वर्मा
41.	शिक्षा में आम्बेडकर की भूमिका	– डॉ. कुलदीप चन्द अग्निहोत्री
45.	जो स्वतंत्र निर्णय लेना सिखाए वही असली शिक्षा	– अरुण कुमार
47.	सरकारी अकादमियों की दुर्गति	– शंकर शरण
49.	प्रतिभा का दायरा	– कृष्ण कुमार रत्तू
51.	वस्तु, सेवा कर और शिक्षा	– दीप्ति चतुर्वेदी
53.	राष्ट्रीय शिक्षा के प्रणेता-गुरुदास बंद्योपाध्याय	– विष्णुप्रसाद चतुर्वेदी
55.	पुस्तक समीक्षा	
56.	गतिविधि	

गुरु की महिमा न्यारी ❑ प्रदीप एस. कुवाडिया

सद्गुरु ऐसी शक्ति है जो शिष्य के सभी प्रकार के शाप, ताप से रक्षा करती है। शरणागत शिष्य के दैविक, दैहिक एवं भौतिक कष्टों को दूर करने का दायित्व गुरु का है। गुरु-शिष्य परंपरा भारतीय संस्कृति का अहम और पवित्र हिस्सा है। जीवन में माता-पिता का स्थान कभी कोई नहीं ले सकता क्योंकि वे ही हमें खूबसूरत रंगीन दुनिया में ले आते हैं और गुरुजी हमें जीवन जीने का असली सलीका सिखाते हैं और सत्यपथ पर चलने को प्रेरित और प्रोत्साहित करते हैं। भारतवर्ष में गुरु की भूमिका समाजसुधारणा से लेकर क्रांतिकारी दिशा दिखाने वाली रही है। प्रवर्तमान युग में सारे विश्व में गुरु महिमा बेजोड़ और अनन्य मानी जा रही है।

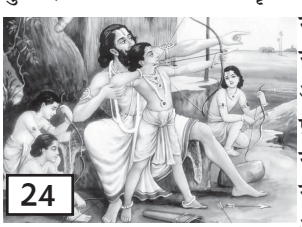

गुरु, आचार्य या शिक्षक

❑ सन्तोष पाण्डेय

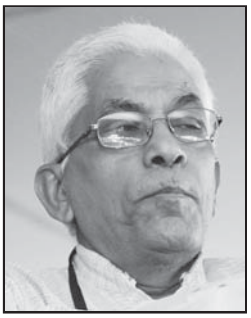

शिक्षक अब 'गुरु' न होकर एक वेतन भोगी कर्मचारी मात्र रह गया है। गुरु शब्द में निहित सम्पूर्ण गुणों, विशेषताओं के विपरीत शिक्षक औपचारिक शिक्षा के एक विषय विशेष का ज्ञान प्रदाता बनकर रह गया है जो न तो शिष्य के जीवन को दिशा दे सकता है तथा न ही कठोर अनुशासन का पालन करा कर शिष्य के जीवन को सर्वहितकारी दिशा में मोड़ सकता है और न श्रेष्ठ मानव निर्माण में योग दे सकता है। विद्यालय में अध्ययन-अध्यापन ही छात्र की जीवन दिशा बनाता है, एक शिक्षक इसका एक भाग मात्र होता है। पश्चिमी दृष्टिकोण पर आधारित विद्यालयी शिक्षा विद्या का मार्ग खोलने के स्थान पर अविद्या को प्रोत्साहित करती है, जिसमें व्यक्ति जीवन की सफलता, भौतिक उपलब्धियों के रूप में मापता है। इसमें व्यक्ति आध्यात्मिक सुख से वंचित रहता है।

संपादकीय

आषाढ़ शुक्ल पूर्णिमा को देश भर में कृष्ण द्वैपायन की जन्मतिथि को गुरु पूर्णिमा पर्व के रूप में मनाने की परंपरा अनादिकाल से चली आ रही है। इस दिन 'गुरु' के प्रति श्रद्धा, आदर, सम्मान व आभार प्रकट किया जाता है। 'गुरु' की छवि एक ऐसी संस्था के रूप में बसी है, जो परमज्ञानी, त्यागी संयमी, संतोषी, जिज्ञासू स्नेहिल व शांतिपूर्ण व्यवहार को प्रकट करती है। आध्यात्मिक गुणों से परिपूर्ण, जीवन के गूढ़ रहस्यों एवं संबंधों की व्याख्या में मर्मत्व संस्कृति व संस्कारों का निर्माता तथा वाहक होता है। वह संसार में रहते हुये भी सांसारिकता से ऊपर होता है, वह अपने ज्ञान व अनुभव को ज्ञान का दान के रूप में शिष्यों को प्रदान करता है। इस ज्ञान दान में जाति, धर्म व ऊँच-नीच का कोई स्थान नहीं होता है। इन सभी गुणधर्मों से युक्त व्यक्ति ही गुरु के रूप में पहचाना जाता है। उसका आवास या आश्रम ही ज्ञान-दान का केन्द्र होता है। ज्ञान-दान के लाभार्थी शिष्य के रूप में आश्रम में आवास कर गुरु सानिध्य से लाभान्वित होते हैं, वे गुरुकुल कहलाये जहाँ गुरु-शिष्य परम्परा की नींव पड़ी। गुरु शिष्य को अपने संपूर्ण ज्ञान से निष्णात करता व पुत्रवत स्नेह के साथ-साथ कठोर अनुशासन का पालन कराते हुये शिष्य के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का सृजन करता, उसे संस्कारित करता व उसे विद्या व अविद्या में दीक्षित कर समाजोपयोगी मनुष्य बनाता। संसार से विरक्त होते हुये भी समाज में जाता और सांसारिक मनुष्यों समस्याओं और जटिलताओं का संज्ञान लेकर गुरुकुल में वापस आकर जप-तप के रूप में उन पर गहन चिन्तन-मनन करता, शिष्यों व अन्य गुरुजनों से विचार-विमर्श (वाद-विवाद व शास्त्रार्थ द्वारा) कर व्यावहारिक निदान खोजता। यही नये ज्ञान के सृजन का बड़ा स्रोत था। गुरु जीवन के सभी क्षेत्रों व पक्षों पर ध्यान केन्द्रित करता। ऐसे सभी गुणों को धारण करने वाला व्यक्ति ही 'गुरु' के रूप में सुशोभित हो सकता है। यह भारतीय संस्कृति की विशालता है कि इसके अन्तर्गत गुरु-शिष्य परम्परा पुष्पित व पल्लवित हुई। इसकी जड़ें इतनी गहरी है कि आज भी मनुष्य जीवन के सभी क्षेत्रों में गुरु की खोज में रहता है। मनुष्य के जीवन को संस्कारित-अनुशासित, नैतिक व धार्मिक तथा आध्यात्मिक गुणों से परिपूर्ण बनाने में गुरु निर्विवाद सर्वोपरि, सर्वोच्च व सर्वस्वीकार्य ख्याति है। गुरु का ऐसा अद्‌भुत स्थान केवल भारतीय संस्कृति में ही संभव है। यही कारण है कि वेदों से लेकर सभी कालों में गुरु का स्थान ईश्वर से ऊपर बताया गया है। गुरु ही ईश्वर से परिचित कराता है। यदि गुरु का आशीर्वाद नहीं तो ज्ञान प्राप्ति नहीं। इसीलिये कहा गया है कि हरि रूठे गुरु ठौर है, गुरु रूठे नहि ठौर। गुरु की यह महिमा है जो प्रत्येक भारतीय के मनमानस में बसी है।

गुरु व गुरुकुलों की सुदृढ़ व सर्वव्यापी व्यवस्था केवल औपचारिक शिक्षा के क्षेत्र में ही व्याप्त नहीं थी, वरन् जीवन के सभी क्षेत्रों में गुरु द्वारा शिष्य का क्षेत्र विशेष में मार्गदर्शन कर जीवन की दिशा को परिवर्तित व परिमार्जित करने की व्यवस्था थी। गुरु-शिष्य संबंध क्षेत्र विशेष, विद्या विशेष, कला-कौशल विशेष में व्यक्तिगत संबंधों की एक अनवरत कड़ी के रूप में भी हो सकता था या फिर कौशल या विद्या विशेष के लिये विशिष्ट आवासीय स्थान हो सकता था। इस प्रकार की गुरु-शिष्य परम्परा राजगुरु, कुलगुरु, संगीत व नृत्य या अन्य कला कौशल के क्षेत्र में व्यापक रूप में विद्यमान रही। औपचारिक शिक्षा के क्षेत्र में काल परिवर्तन के साथ गुरुकुल तथा गुरु-शिष्य परंपरा भले ही सच न हुई हो लेकिन जीवन के अन्य क्षेत्रों में गुरु का स्थान आज भी सर्वोपरि है। धार्मिक, आध्यात्मिक, संगीत व नृत्य तथा विविध कला कौशल की विधाओं में व्यक्ति आज भी गुरु के गहन शिक्षण-प्रशिक्षण के बिना संबंधित क्षेत्र में पूर्णता प्राप्त नहीं कर सकता है। 'गुरु' के नाम की ख्याति से शिष्य को मान्यता, स्वीकार्यता एवं ख्याति मिलती है, तो शिष्य की ख्याति व उपलब्धि से गुरु व गुरुकुल की महत्ता में अभिवृद्धि होती है। यह भारतीय सांस्कृतिक परंपरा व विरासत का ही प्रभाव है जिसमें गुरु शिष्य से व पिता-पुत्र से पराजित होने की कामना करता है एवं पराजित होने पर गर्व का अनुभव करता है। इसी परंपरा में समाज व संस्कृति की अनवरत प्रगति का राज छिपा है।

समय अपनी गति से निरन्तर बढ़ता है और परिवर्तन होते रहते हैं, यह शाश्वत नियम है। कालान्तर में गुरुकुल व्यवस्था के साथ-साथ आचार्य, उपाध्याय

व आचार्यकुल व्यावहारिक जीवन में आये। आचार्य व उपाध्यायों का कार्य-क्षेत्र मुख्यत: औपचारिक शिक्षा केन्द्र के रूप में विकसित हुआ। आचार्य विषय विशेष के विशेषज्ञ विद्ववद्जन होते, जो शिष्य को सम्पूर्ण ज्ञान प्रदान करते। कालान्तर में गुरु से आचार्य, आचार्य से उपाध्याय व उपाध्याय से शिक्षक तक का सफर तय हुआ। इस परिवर्तन को पूर्ण होने में हजारों वर्ष लगे। योरोपवासियों जिनमें अंग्रेज प्रमुख थे के आगमन तक भारत की गुरु-शिष्य परम्परा गुरुकुल, गुरु-आचार्य व उपाध्याय तक बहुत प्रभावी रही। परन्तु पश्चिमी दृष्टिकोण वाली संस्कृति जिसमें आध्यात्मिकता के स्थान पर भौतिकवाद की प्रधानता थी के आने पर शिक्षा के क्षेत्र में व्यापक परिवर्तन दृष्टिगोचर हुये। शिक्षा अब आवासीय न होकर कुछ ही समय तक 'विद्यालय' में उपस्थिति तक सीमित हो गई। विद्यालय वह स्थान जिसमें निश्चित समय पर निश्चित समय तक शिक्षक व छात्र उपस्थित होते हैं व एक निश्चित पाठ्यक्रम (ज्ञान का स्तर) का पठन-पाठन व शिक्षण-प्रशिक्षण प्राप्त करते हैं तथा शेष समय स्वयं के अध्ययन हेतु परिवार में रहते हैं। शिक्षा का एक निर्धारित स्तर प्राप्त कर उपाधि पाते हैं। यह ही शिक्षा की संपूर्णता है। यह गुरुकुल व्यवस्था के गुरु-शिष्य के विशिष्ट संबंधों के एकदम विपरीत है। इस व्यवस्था में शिक्षक अब 'गुरु' न होकर एक वेतन भोगी कर्मचारी मात्र रह गया है। गुरु शब्द में निहित सम्पूर्ण गुणों, विशेषताओं के विपरीत शिक्षक औपचारिक शिक्षा के एक विषय विशेष का ज्ञान प्रदाता बनकर रह गया है जो न तो शिष्य के जीवन को दिशा दे सकता है और न कठोर अनुशासन का पालन करा कर शिष्य के जीवन को सर्वहितकारी दिशा में मोड़ सकता है तथा न ही श्रेष्ठ मानव निर्माण में योग दे सकता है। विद्यालय में अध्ययन-अध्यापन ही छात्र की जीवन दिशा बनाता है, एक शिक्षक इसका एक भाग मात्र होता है। पश्चिमी दृष्टिकोण पर आधारित विद्यालयी शिक्षा विद्या का मार्ग खोलने के स्थान पर अविद्या को प्रोत्साहित करती है, जिसमें व्यक्ति जीवन की सफलता, भौतिक उपलब्धियों के रूप में मापता है। इसमें व्यक्ति आध्यात्मिक सुख से वंचित रहता है। परिणाम है कि आज शिष्य किसी भी गुरु की कार्बन कापी नहीं है। वर्तमान की औपचारिक शिक्षा व्यवस्था में शिक्षक जो गुरु के स्थान पर आया है, एक गुरु के लिये आवश्यक अवयवों से युक्त नहीं है, वरन् वह एक वेतन भोगी एक सामान्य कर्मचारी है, जो परिवार के लालन-पालन व उसकी उन्नति का समानता के प्रति प्रतिबद्ध होता है। ऐसे वातावरण में क्या चरित्र निर्माण, मानव निर्माण, सामाजिक व नैतिक दायित्वों के प्रति संवेदनशील व जागरूक व्यक्तित्व का निर्माण संभव है? क्या ऐसी शिक्षा प्रणाली व शिक्षा व्यवस्था को विकसित करने के प्रयास नहीं किये जायें जिसमें शिक्षक एक वेतन भोगी कर्मचारी से ऊपर उठकर अपने छात्रों को शिष्य रूप में स्वीकार कर उसके जीवन निर्माण में संपूर्ण शक्ति लगाये। यह संभव हो सकता है जब औपचारिक शिक्षा को संस्कृति का वाहक, संस्कारों का निर्माण स्थल, नैतिक बल को पुष्ट करने और देश व समाज के प्रति कर्तव्य निर्वाहक का दायित्व निभाने वाले व्यक्तियों के निर्माण का माध्यम बनाया जाय। शिक्षकों के चयन व उनकी विषय योग्यता व विशेषज्ञता को देखकर नहीं, वरन् 'गुरु' के लिये अपेक्षित गुणों को देखकर किया जाय। ऐसी व्यवस्था निर्मित करने पर गुरु कृपा संभव हो सकती है।

देश की वर्तमान शिक्षा व्यवस्था इन्हीं व्याधियों से ग्रस्त हो कर लक्ष्य विहीन है? आधुनिक शिक्षा व्यवस्था कड़ी प्रतियोगी, भौतिक लक्ष्यों के प्रति समर्पित हो चुकी है। यह सरकारी प्रक्रियाओं, जटिलताओं, संवेदनहीन प्रशासन व्यवस्था व गैर वैयक्तिक संबंधों से युक्त हो चुकी है। इसे इनमें जकड़ने से मुक्त कराना आवश्यक है। इसके लिये शिक्षा व्यवस्था के स्वायत्त स्वावलंबी, स्वाभिमानी बनाना आवश्यक है। शिक्षा को मिशनरी भावना से श्रेष्ठ मानव सेवा के भाव से संचालित करना होगा। शिक्षा का पाठ्यक्रम पाठ्यचर्या ऐसी हो जिसमें कठोर अनुशासन, शिक्षक सानिध्य, प्रयोगधर्मिता, नैतिक शिक्षा, भारतीय जीवन व संस्कृति के शाश्वत मूल्य तथा संस्कार निर्माण, समाज व राष्ट्र के प्रति कर्तव्य एवं समर्पण भाव को प्रेरित करने की प्रबल भावना से ही आज भी गुरु की गरिमा व प्रासंगिकता की निर्मिति की जा सकती है। इसके लिये शिक्षकों को भी गुरु बनना होगा। शिक्षकों को गुरु के रूप में अवतरित होने के लिये गुरु शब्द में निहित आवश्यक गुणों को अपनाना होगा। यह संभव है कि आज गुरु जिस रूप में बने वह सांसारिक व पारिवारिक हितों का पोषक होते हुये गुरु की छवि से एकाकार हो। इसके भारी वैयक्तिक ईमानदारी, शिक्षा के प्रति निष्ठा तथा शिष्यों के व्यक्तित्व निर्माण व उनके अन्तर्निहित सभी संभावनाओं सत्कार बनाने की उत्कृष्ट संकल्प शक्ति आवश्यक है। आज शिक्षा को तकनीक में भारी विकास हो चुका है। शिक्षक आज ज्ञान प्राप्ति का एक मात्र स्रोत नहीं है। फिर भी गुरु-शिष्य का घनिष्ठ संबंध आवश्यक है। शिष्य की गुरु के साथ निकटता एक भावात्मक रूप लेती है, जिसमें शिष्य के व्यक्तित्व निर्माण में गुरु का आचरण व व्यवहार सीधे-सीधे प्रभाव डालता है। इस प्रकार के शिक्षक के निर्माण में गहन शिक्षक प्रशिक्षण महत्त्वपूर्ण योग दे सकता है। शिक्षक को अधिकार होना चाहिये कि वे तय करे कि छात्रों को क्या और कैसे पढ़ाया जायेगा। छात्रों की वैयक्तिक योग्यताओं को विकसित करने हेतु विशिष्ट प्रयोग करने का अधिकार व सुविधा होनी चाहिये। शैक्षिक प्रशासन का दृष्टिकोण भी छात्र केन्द्रित होना अपेक्षित है। सरकारी नियमों और प्रक्रियाओं की जटिलताओं को शिथिल किया जाना चाहिये। शिक्षक स्वयं तो गुरु रूप ग्रहण करने के लिये संकल्पबद्ध हो सकते हैं परन्तु आज के संगठन प्रधान काल में शिक्षक संगठन भी शिक्षक को गुरु बनाने में योग दे सकते हैं। इन सभी के लिये सरकारों को भी उदार बनना होगा तथा देश व राष्ट्र की उन्नति जो विद्या-अविद्या दोनों ही क्षेत्रों में हो, के लिये शिक्षा को भौतिक प्रगति पर प्राथमिकता प्रदान कर उदारतापूर्वक वित्तीय व अन्य संसाधन जुटाने पर ध्यान केन्द्रित करना होगा। साथ ही शिक्षक के गुरु रूप ग्रहण करने पर ही शिष्यों को गुरुकृपा नसीब होगी और गुरु रूठे नहीं ठौर की अवस्था से बचा जा सकेगा। ❑

गुरु का सानिध्य : समष्टि का कल्याण

❑ प्रो. मधुर मोहन रंगा

राष्ट्र व समाज के सर्वांगीण विकास में शिक्षा प्रदान करना और शिक्षा ग्रहण करना दोनों ही महत्त्वपूर्ण होते हैं। ज्ञान के अभाव में शिक्षार्थी को मार्गदर्शन नहीं प्राप्त हो सकता है। समष्टि के कल्याण हेतु ज्ञान, श्रेष्ठ गुरु द्वारा ही प्रदान किया जा सकता है अत: शिक्षा प्रदान करने व शिक्षा ग्रहण करने हेतु ही भारतीय परम्परा में गुरु शिष्य संबंध बना है, क्योंकि गुरु ने ही युगों-युगों से ज्ञान की ज्योति जलाये रखी तथा समाज व राष्ट्र का मार्गदर्शन किया। प्राचीन भारत में शिक्षा ग्रहण करने के लिए विद्यार्थी गुरुकुल में या आश्रमों में शिक्षा अर्जन के लिए जाया करते थे, क्योंकि गुरुकुल श्रद्धा के श्रेष्ठतम केन्द्र होते थे। शिक्षा प्रदाता, गुरु को ईश्वर के समक्ष माना जाता था। गुरु का विद्यार्थी के प्रति पुत्र तुल्य व्यवहार होता था व गुरु यथा संभव उन्हें शिक्षित करने का प्रयास करते थे।

आदि काल से ही भारत में गुरु शिष्य परम्परा रही है भारतीय गुरु परम्परा का उदात्त चरित्र और उनकी सत्यनिष्ठा, कर्मठता व सरलता के कारण आर्यावर्त में अनेक विद्वान गुरुओं का मार्गदर्शन रहा है। भारतीय गुरु-शिष्य परम्परा एकपक्षीय न होकर उभयपक्षीय रही है, इसी कारण दोनों के मध्य विचारों का आदान-प्रदान व सातत्य होने से सार्थक पाथेय, राष्ट्र को मिलता रहा है। इसलिए राष्ट्र के समग्र विकास में गुरु की भूमिका को नकारा नहीं जा सकता क्योंकि भारतीय शिक्षा का लक्ष्य आन्तरिक एवं बाह्य विकास है। गुरु की महत्ता व शिक्षार्थी की सीखने की प्रतिबद्धता दोनों इस उज्ज्वल परम्परा के महत्त्वपूर्ण भाग रहे हैं। इस प्रणाली में यह आभास ही नहीं होता है कि गुरु के नाम को शिष्य प्रतिष्ठा प्रदान करा रहा है या शिक्षार्थी की पहचान उसके गुरु के नाम से हो रही है। समाज, विद्वान व विश्लेषक अपने अनुसार इस पावन सानिध्य की व्याख्या करते रहते हैं। रामकृष्ण परमहंस और विवेकानंद, बिरजानंद और दयानन्द, निवृत्तिनाथ और ज्ञानेश्वर, गोविन्दपाद व शंकराचार्य, रामानंद और कबीर, रैदास और मीरा, समर्थगुरु रामदास और शिवाजी, जर्नादन स्वामी और एकनाथ, गुरु-शिष्य की यह प्राचीन परम्परा आर्यावर्त में बहुत समृद्ध रही है जिसका मुख्य कारण गुरुत्व व शिष्यत्व में उन सभी गुणों का समावेश रहा है, जिसके कारण दोनों में विद्या प्रदान करना व उसे ग्रहण करने की सात्विक प्रवृति रही है। शिष्य के जीवन में उभरा प्रकाश पुंज ही शिष्य की वास्तविक पहचान है। इन्हीं भावों को ध्यान में रखकर इस पावन परम्परा पर लिखने का प्रयास किया गया है।

राष्ट्र व समाज के सर्वांगीण विकास में शिक्षा प्रदान करना और शिक्षा ग्रहण करना दोनों ही महत्त्वपूर्ण होते हैं। ज्ञान के अभाव में शिक्षार्थी को मार्गदर्शन प्राप्त नहीं हो सकता है। समष्टि के कल्याण हेतु ज्ञान, श्रेष्ठ गुरु द्वारा ही प्रदान किया जा सकता है अत: शिक्षा प्रदान करने व शिक्षा ग्रहण करने हेतु ही भारतीय परम्परा में गुरु शिष्य संबंध बना है, क्योंकि गुरु ने ही

युगों-युगों से ज्ञान की ज्योति जलाये रखी तथा समाज व राष्ट्र का मार्गदर्शन किया। प्राचीन भारत में शिक्षा ग्रहण करने के लिए विद्यार्थी गुरुकुल में या आश्रमों में शिक्षा अर्जन के लिए जाया करते थे, क्योंकि गुरुकुल श्रद्धा के श्रेष्ठतम केन्द्र होते थे। शिक्षा प्रदाता, गुरु को ईश्वर के समक्ष माना जाता था। गुरु का विद्यार्थी के प्रति पुत्र तुल्य व्यवहार होता था व गुरु यथा संभव उन्हें शिक्षित करने का प्रयास करते थे। शिक्षा पूर्ण होने के पश्चात् दीक्षान्त समारोह का आयोजन किया जाता था। जिसमें गुरु, शिक्षार्थी को दीक्षित करते व प्रतिज्ञा करवाते कि जिन शिक्षाओं का यहाँ अध्ययन कराया गया है, उनका उपयोग मानव कल्याण व समष्टि के उपयोग के लिए ही किया जाय, इसी कारण ज्ञान देश में सुख-समृद्धि और वैभव का एक कालखण्ड था, परन्तु धीरे-धीरे वह व्यवस्था समाप्त हो गयी, यही वजह है कि हम परिवर्तित समाज देख रहे हैं। अत: आवश्यकता इस बात की है कि हम प्राचीन गुरुकुल प्रणाली में समयानुकूल परिवर्तन कर एक सक्षम गुरु शिष्य परम्परा को विकसित कर सकते हैं। यहाँ कुछ उदाहरण देना प्रासंगिक समझता हूँ। जिनसे यह सत्य प्रतिपादित होता है कि आश्रम या गुरुकुल की शिक्षा ग्रहण करने के पश्चात् शिक्षार्थी का सर्वांगीण विकास हुआ तथा उसने राष्ट्र निर्माण व समाज निर्माण में सहायक होकर महत्त्वपूर्ण योगदान इस राष्ट्र को प्रदान किया। महाभारत काल में अर्जुन के गुरु द्रोणाचार्य ने अर्जुन को जीवन के गूढ़तम रहस्यों का ज्ञान कराया, चाणक्य के मार्गदर्शन में चन्द्रगुप्त ने मौर्य साम्राज्य की स्थापना की।

महाभारत, धर्म सूत्र (गौतम बुद्ध का) व मनुस्मृति आदि में प्राचीन भारत की शिक्षा के सिद्धान्तों का वर्णन है। भारत में शिक्षा का उद्देश्य समाज का उत्थान व समग्र विकास रहा है, इसी से सशक्त राष्ट्र का निर्माण होता है। प्राचीनकाल में शिक्षा का उद्देश्य ज्ञान अर्जित करना था यह वैदिक काल से ब्राह्मण काल तक में वर्णित है । भगवान् श्री कृष्ण ने महर्षि संदीपनी के आश्रम में रह कर शिक्षा ग्रहण की, इसी प्रकार राम व लक्ष्मण ने गुरु विश्वामित्र से मार्गदर्शन प्राप्त किया। अत: प्राचीनकालीन वेद व अन्य ग्रन्थ विकसित शिक्षा व्यवस्था की ओर इंगित करते हैं, जहाँ के आश्रम व गुरुकुल आवासीय विद्यालयों के रूप में थे। विद्यार्थी हमारा आराध्य कहलाता था, उसके अंदर प्रसुप्त प्रतिभा, असीमित क्षमता व अतुलित गुण सम्पदा का भंडार है, वह निर्विकल्प भाव से इस धरा में पदार्पण करता है और गुरुकुल या आश्रमों के चतुर्दिक फैले हुए वातावरण से संस्कारित होता था, इसी प्रकार के भाव व सेवा की आज आवश्यकता है। गुरु वह है, जिसके आभामंडल में शिक्षार्थी स्वयं को खिंचता हुआ अनुभव करता है। जितना ज्यादा हम गुरु की ओर आकर्षित होते हैं, उतनी ही ज्यादा स्वाधीनता हमें प्राप्त होती है। कबीर, नानक, बुद्ध, रामकृष्ण परमहंस, समर्थगुरु रामदास आदि का स्मरण ऐसी ही विभिन्न अनुभूति का अहसास कराता है, गुरु के प्रति समर्पण भाव का तात्पर्य दासता से नहीं है, बल्कि इससे मुक्ति का भाव जाग्रत होता है, गुरु के समीप जाते ही हम आत्मज्ञान पाने लायक बनते हैं, सच्चा गुरु स्वयं की शिक्षाओं को थोपता नहीं है, बल्कि वह अपने आचरण व व्यवहार से हमारे सामने ऐसे उदाहरण प्रस्तुत करता है, जिससे हम वैसा व्यवहार अपनाने के लिये प्रेरित होते हैं। समर्थ गुरु अपने शिक्षार्थियों को ज्ञान देने के साथ-साथ जीवन में अनुशासन में जीने का कला भी सिखाते हैं। वह व्यक्ति में सत्कर्म और अच्छे विचार का प्रेषण करते हैं। पुराणों में दिये गये प्रसंग भी यह संदेश देते हैं कि अगर मन में लगन हो तो कोई भी व्यक्ति गुरु को कहीं पर भी प्राप्त कर सकता है। एकलव्य ने मिट्टी की मूर्ति में गुरु को प्राप्त कर लिया और महान् धनुर्धर बन जगद्गुरु दत्तात्रेय ने 24 गुरु बनाये व प्रत्येक से शिक्षा ग्रहण की, उन्होंने धरा पर उपस्थित हर प्राणी, वनस्पति और ग्रह नक्षत्र को अपना गुरु माना, जिससे प्रकृति के गुणों से शिक्षा प्राप्त की जा सकती है। उन्होंने पृथ्वी से क्षमा और नि:स्वार्थ भाव, वायु से दूसरे के प्राणों को सुरक्षा, आकाश में गंभीरता, अर्णव से किसी भी परिस्थिति में एक सा रहना, पानी के पालन-पोषण की भावना और अग्नि से शुद्धता का भाव सीखा। नक्षत्रों में उन्होंने चन्द्रमा से घटने-बढ़ने के बावजूद एक ही स्वभाव व व्यवहार रखना और सूर्य से अंधकार मुक्त होना सीखा। इस प्रकार प्रत्येक के प्रति सम्यक् सोच रख कर सकारात्मक दृष्टिकोण अपनाने पर प्रत्येक से महत्त्वपूर्ण शिक्षा प्राप्त की जा सकती है। गुरु हमारे अंदर संस्कारों का सृजन, गुणों का संवर्धन और वासनाओं एवं हीन ग्रंथियों का दमन कर व्यक्ति निर्माण, समाज निर्माण, राष्ट्र निर्माण व प्राचीन ऋषियों द्वारा बताये ध्येय **''कृण्वन्तो विश्व मार्यम्''** अर्थात् समस्त जगत् को सुसंस्कृत बनाओ का संदेश देते हैं। गुरु के मार्गदर्शन से ही विश्व को एक संघर्षविहीन समाज प्रदान किया जा सकता है, यह अद्वितीय एवं कल्पनातीत सेवा कार्य होगा।

अत: उपर्युक्त कुछ उदाहरणों से स्पष्ट है कि प्राचीन कालीन शिक्षा व्यवस्था में गुरु-शिष्य परम्परा का उत्कृष्ट व अनुपम उदाहरण मिलता है। वह एक आदर्श शिक्षा प्रणाली थी, जिसमें सम्पूर्ण विश्व के कल्याण की बात कही गई है। अत: आज भी इसी प्रकार सम्पूर्ण विश्व को एक परिवार मानकर हम चलें तो समष्टि का कल्याण व उत्थान होगा। प्राचीन शिक्षा प्रणाली के शाश्वत जीवन मूल्यों को हम आत्मसात् करने का प्रयत्न करें तभी प्रभावी शिक्षण होगा व गुरु शिष्य परम्परा पुन: जीवित होगी।

गुरु की शिष्य के प्रति आत्मीयता व वात्सल्य ही इस परम्परा का मूल है, परन्तु परिवर्तित होते वैश्विक बाजारवाद को तदर्थवादी मूल्यों ने प्रेम-वात्सल्य को नकार दिया है व समर्पण को स्वतन्त्र वैचारिकता का विरोधी मान लिया है। व्यावसायिकता के बढ़ते प्रभाव में शिक्षक एक वेतन भोगी कर्मचारी तक ही सीमित हो गया है। अत: सम्पूर्ण परिदृश्य पर विचार कर शिष्य के सीखने-जानने की निष्ठा को परिष्कृत कर उसके समग्र विकास में इस प्राचीन परम्परा की उपादेयता को प्रतिस्थापित करना होगा। ❑

(विभागाध्यक्ष, पर्यावरण विज्ञान विभाग,
सरगुजा वि.वि., अम्बिकापुर, छत्तीसगढ़)

गुरु चेतना का प्रवाह और साहित्य

❑ प्रो. नन्द किशोर पाण्डेय

14वीं से 17वीं शताब्दी तक गुरु को जो प्रतिष्ठा भारतीय साहित्य में मिली, वह अन्यत्र दुर्लभ है। शिष्यों और गुरुओं ने जाति बंधन को तोड़ा। कई शिष्यों ने कई गुरु बनाए। यह परम्परा पुराणों में भी है। सवर्ण का गुरु अवर्ण और अवर्ण का गुरु सवर्ण हो सकता है। ऐसे दर्जनों उदाहरण भक्ति साहित्य में उपलब्ध हैं। रामानुजाचार्य इस दृष्टि से क्रांतिकारी आचार्य थे। उनके गुरुओं में कांचिपूर्ण, महापूर्ण और गोष्ठिपूर्ण शूद्र थे। महापूर्ण से ही रामानुजाचार्य ने तमिल प्रबन्धमाला का अध्ययन किया था। संतों ने जिन ग्रंथों का संग्रह किया वे पोथियाँ भी गुरुपद को प्राप्त हुईं। गुरुग्रंथ साहिब की प्रतिष्ठा गुरुपद पर हुई। 'दादूवानी' दादूदयाल के मंदिरों में स्थापित की गई। संतों में कबीर ने गुरु से संबंधित जो साखियाँ लिखीं वे जनमानस में रच-बस गईं। सच्चे गुरु के रूप में उन्हें रामानंद मिले थे। रामानंद के सान्निध्य ने उनकी आँखें खोल दीं। कबीर तो सीस देकर भी गुरु प्राप्त कर लेना चाहते हैं।

भारतीय चिंतनधारा में गुरु प्रारंभ से ही साक्षात ब्रह्म तुल्य माना गया है। जीवन में अभ्युदय और नि:श्रेयस् दोनों का कारक गुरु है। भौतिक और आध्यात्मिक दोनों प्रकार के उत्कर्ष का। उपलब्धियों की कामना भारतीय मन सदैव से करता रहा है। इनकी प्राप्ति के अन्य कई कारक हो सकते हैं। अनेकानेक प्रकार के देवी-देवताओं की अभ्यर्थना भी सहायक है। अपने-अपने इष्टदेव की परिकल्पना और व्यवस्था भी हिन्दू धर्म और समाज के भीतर है। ये देवी और देवता भी मनोकामनाओं को पूर्ण करते हैं। उनकी उपासना के लिए विभिन्न प्रकार के उपचार भी बतलाए गए हैं। अलग-अलग देवी-देवताओं की पूजा के लिए पुष्प, नैवेद्य, मंत्र एवं उपासना विधि की पृथक-पृथक व्यवस्था दी गई है। देवता इन पद्धतियों से प्रसन्न होते हैं एवं अपने भक्त को आशीर्वाद देते हैं। समस्त प्रकार की मनोकामनाओं की पूर्ति होती है। सहस्राब्दियों से भारतीय समाज इसका आचरण करता आ रहा है। इन उपायों की चर्चा पुरोहित या गुरु करता है। इस ज्ञान के प्रणेता पुरोहित और गुरु को भी समान रूप से पूज्यता प्राप्त है क्योंकि इस उपासना पद्धति और मंत्र का ज्ञाता तथा दृष्टा है वह। मंत्र की सिद्धि में सहायक भी है। पूरा संस्कृत साहित्य अनेकानेक प्रकार की उपासना पद्धतियों एवं उनसे संबंधित देवी-देवताओं की पूजा-अर्चना एवं उसके परिणामस्वरूप फल प्राप्ति के आख्यानों से भरा पड़ा है।

14वीं शताब्दी में भारतीय समाज में कुछ ऐसी स्थितियाँ घटित हुईं कि अनेकानेक देवी-देवताओं की पूजा-उपासना के स्थान पर गुरु केंद्र में आ गया। यह स्थिति 17वीं शताब्दी तक भारतीय समाज में परिचालित रही। ये स्थितियाँ 14वीं शती के पहले ही निर्मित होने लगी थीं। पूज्य का परिवर्तित हो जाना कोई नई बात नहीं थी। वैदिक देवताओं की पूज्यता के स्थान पर पुराण काल में अन्य देवता पूजित होने लगे थे। इन्द्र और वरुण की पूजा शिथिल पड़ते-पड़ते प्राय: विलुप्त सी हो गई। शिव, विष्णु, सरस्वती, दुर्गा जैसे देवता और देवी पूज्य हुए। फिर राम-कृष्ण उपास्य बने। आज भारत में आराधना के केंद्र में विशेष रूप से हनुमान जी, शनि देव तथा साईं बाबा हैं। दयानंद सरस्वती के मूर्ति पूजा के विरोध के कारण विशेष रूप से पश्चिमी भारत का एक बड़ा समाज पुन: वेदों की ओर मुड़ा। धीरे-धीरे यह चिंतन प्रवाह भी शिथिल पड़ गया। ग्रह-नक्षत्रों की शांति के स्थान पर उनकी विशेष पूजा प्रचलित हो गई। 20 वीं-21वीं शताब्दी में व्यक्ति पूजा का प्रचलन बढ़ा। हिंदू, धर्म के अनेक आचार्यों और गुरुओं ने स्वयं को ईश्वर या भगवान के रूप में स्थापित किया। शिष्यों के बीच इसे प्रचारित-प्रसारित भी किया। अनुयायियों ने चमत्कारों की कथाएँ गढ़ी, अन्य को सुनाया और अपनी मंडली का विस्तार किया। धीरे-धीरे ऐश्वर्यमय मंदिर भगवानों के नाम पर खड़े हो गए। भारतीय वेदान्त की चेतना यथा- ईश्वर का अंश जीव है, वह अविनाशी है। ईश्वर और जीव में कोई भेद नहीं है। आत्मा और परमात्मा एक ही है। अनेक कारणों से वह पृथक दिखलाई पड़ता

है। वह नाना नाम रूपों में विद्यमान'' है। इस तत्व ज्ञान को परिभाषित करते हुए तथा नाना प्रकार के प्रसंगों-उद्धरणों से कथावाचकों, दार्शनिकों एवं चमत्कारियों ने स्वयं को ब्रह्म के रूप में स्थापित किया। शिष्यों ने उनमें ब्रह्म का साक्षात्कार किया और उन्हें मंदिर के भीतर बाँध दिया। सूर्य और गंगा प्रत्यक्ष देवता हैं। सूर्य वैदिक देवता हैं। उनके मंत्र हैं। कुछ गिनती के सूर्य मंदिर भारत में बने, जो बने वे पूजा के साथ ही अपने स्थापत्य और वास्तुकला के लिए पहचाने गए। आज गंगा के किनारे गंगा के मंदिर बने हैं, गंगा प्रदूषित और मैली है। भक्तों ने गंगा के प्रत्यक्ष बहाव से मुँह मोड़कर गंगातट पर स्थापित गंगा मंदिरों में प्रवाह, शीतलता, प्राचीनता और जीवनदायिनी के प्रति कृतज्ञता की अनुभूति की और कर रहे हैं। कहीं-न-कहीं इसके पीछे का भाव एक मंदिर के बहाने से मूल पूजा के स्थान पर अनेक कारणों से दूसरी पूजा को स्थापित करना है। यह सब आकस्मिक नहीं होता। सुविचारित प्रयासों का परिणाम होता है। लोभ और मत निर्माण की भावना भी इसके मूल में है। मरणधर्मा जीव ने अपने एक जन्म के शरीर को ही अमर मानकर स्वयं को मंदिरों में स्थापित करवाकर धन्यता की अनुभूति की। कुछ लोगों की मूर्तियाँ इन महापुरुषों के निधन के तत्काल बाद स्थापित की गई। वैदिक देवता विस्मृति के गर्त में चल गए। इन्द्र जैसे वैदिक देवता को चरित्र-भ्रष्ट के रूप में पुराणों में स्थापित किया गया। इस कृत्य ने इन्द्र की ही नहीं वैदिक देवताओं की तथा सनातन शुद्ध परम्परा को भी क्षत किया।

इस्लाम के आक्रमणों तथा मंदिरों के विध्वंस ने स्थापित मूर्तियों के प्रति हिंदू जनता का मोह भंग किया। ऐसे भी सनातन परम्परा में मूर्ति पूजा को उपासना के सोपान के रूप में ही देखा गया है। यह मानकर पूजा की जाती है कि ईश्वर की सत्ता सर्वत्र है तो मूर्ति में भी होगी। उस विराट ब्रह्म को

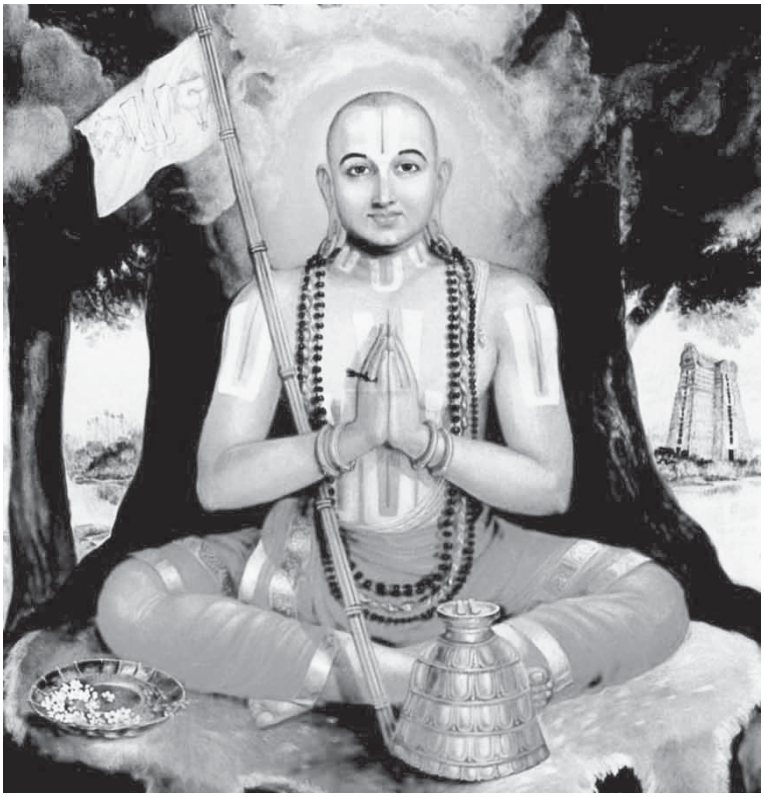

अपने ध्यान में रखने के लिए एक स्थान या स्वरूप विशेष आवश्यक है। निरालंब को ध्यान में लाना कठिन है-

सूरदास ने कहा -

सब विधि अगम विचारहि ताते
सूर सगुन लीला पद गावै।

भक्ति आंदोलन भारतीय साहित्य का सबसे बड़ा आंदोलन है। इस आंदोलन के सहभागी, सहगामी एवं अनुचर सगुण और निर्गुण दोनों प्रकार के भक्त-संत हैं। सर्वाधिक संख्या निर्गुण संतों की है। इन संतों में सभी जाति-वर्णों के संत हैं। बड़ी संख्या मुसलमानों की भी है। निर्गुण संतों के साहित्य में परम्परा से पूजित देवी-देवता अनुपस्थित हैं। निर्गुण-संतों ने एकमात्र पूज्य गुरु को माना। सगुणोपासक संतों के साहित्य में गुरु के अतिरिक्त अन्य देवी-देवता भी हैं। गोस्वामी तुलसीदास ने गणेश, शिव, पार्वती, विष्णु, सरस्वती, राम, सीता, हनुमान, गंगा आदि अनेक देवताओं की अभ्यर्थना की है। उन्होंने विशेष रूप से गुरु का स्मरण किया है। बालकाण्ड के प्रारंभ में ही वे गुरुवंदना करते हैं -

बंदौं गुरुपद कंज कृपा सिंधु नररूप हरि।
महामोह तम पुंज जासु बचन रविकर निकर।।
बंदौं गुरुपद पदुम परागा।
सुरुचि सुवास सरस अनुरागा।।

कारण भी देते हैं -

अमिय मूरिमय चूरन चारू।
समन सकल भव रुज परिवारु।
सुकृति संभुतन बिमल बिभूती।
मंजुल मंगल मोद प्रसूती।।

बड़े-बड़े साधक सिद्ध और सुजान अपने आँखों में सुअंजन लगाकर पर्वतों, वनों और भूतल के कौतुक को देख लेते हैं। उसका कारण यह है कि गुरु के चरणों की धूलि कोमल और सुन्दर काजल है जो आँखों के लिए अमृत के समान है। यह काजल नेत्रों के दोषों का नाश कर देता है। तुलसीदास उस अंजन से विवेक रूपी नेत्रों को निर्मल करके संसार रूपी बंधन से छुड़ाने वाले

रामचरित का वर्णन करते हैं –

जथा सुअंजन अंजि दृग साधक सिद्ध सुजान।
कौतुक देखहिं सैल बन भूतल भूरि निधान।।
गुरुपद रज मृदु मंजुल अंजन।
नयन अमिय दृग दोष बिभंजन।।
तेहि करि बिमल बिबेक बिलोचन।
बरनऊं रामचरित भवमोचन।।

निर्गुण संतों ने केवल और केवल गुरु की अभ्यर्थना की। उनके ग्रंथों में 'गुरु के अंग' के रूप में कई अध्याय हैं। सगुण संतों के यहाँ गुरु महिमा जैसा कोई अध्याय नहीं हैं। महाभारत और रामायण उपजीव्य काव्य ग्रंथ हैं। इन दोनों ग्रंथों में भी गुरु भक्तों का वर्णन यत्र-तत्र है लेकिन संत महिमा की तरह पूरे प्रंसग में गुरु को वर्णित नहीं किया गया है। 14वीं से 17वीं शताब्दी तक गुरु को जो प्रतिष्ठा भारतीय साहित्य में मिली, वह अन्यत्र दुर्लभ है। शिष्यों और गुरुओं ने जाति बंधन को तोड़ा। कई शिष्यों ने कई गुरु बनाए। यह परम्परा पुराणों में भी है। सवर्ण का गुरु अवर्ण और अवर्ण का गुरु सवर्ण हो सकता है। ऐसे दर्जनों उदाहरण भक्ति साहित्य में उपलब्ध हैं। रामानुजाचार्य इस दृष्टि से क्रांतिकारी आचार्य थे। उनके गुरुओं में कांचिपूर्ण, महापूर्ण और गोष्ठिपूर्ण शूद्र थे। महापूर्ण से ही रामानुजाचार्य ने तमिल प्रबन्धमाला का अध्ययन किया था। यह ग्रंथ तमिल में 'दिव्यप्रंबधम्' के नाम से विख्यात है। लगभग चार हजार श्लोकों का अध्ययन उन्होंने महापूर्ण से किया था। गोष्ठिपूर्ण तो उनके दीक्षा गुरु थे। उन्होंने ही उन्हें ''ऊँ नमो नारायणाय'' मंत्र की दीक्षा दी थी। गोष्ठिपूर्ण ने रामानुज को अठारह बार लौटाया था। गोष्ठिपूर्ण को जब यह विश्वास हो गया कि रामानुज तपस्वी एवं मंत्र धारण करने की क्षमता से युक्त हैं, तब यह मंत्र प्रदान किया। रामानुज ने इस सर्वकल्याणकारी मंत्र को जन-जन तक प्रचारित करने का यत्न किया।

कबीर, नामदेव, दादूदयाल, रैदास तथा रज्जब जैसे संतों ने अपनी रचनाओं में गुरु को ही सर्वस्व माना। संतों ने जिन ग्रंथों का संग्रह किया वे पोथियाँ भी गुरुपद को प्राप्त हुईं। गुरुग्रंथ साहिब की प्रतिष्ठा गुरुपद पर हुई। 'दादूवानी' दादूदयाल के मंदिरों में स्थापित की गई। संतों में कबीर ने गुरु से संबंधित जो साखियाँ लिखीं वे जनमानस में रच-बस गईं। सच्चे गुरु के रूप में उन्हें रामानंद मिले थे। रामानंद के सान्निध्य ने उनकी आँखें खोल दीं। कबीर तो सीस देकर भी गुरु प्राप्त कर लेना चाहते हैं। गुरु अमृत की खान है-

यह तन विष की बेलरी, गुरु अमृत की खान।
सीस दिये जो गुरु मिले, तो भी सस्ता जान।।

कोई भी कालखण्ड हो, जिसे अच्छा गुरु प्राप्त नहीं होता, वह विकास की संभावनाओं से वंचित हो जाता है। पारलौकिकता का बोध तो बहुत दूर की बात है। संत रविदास की साटी याद करते हैं, ज्ञान के अक्षरों की बात करते हैं-

चल मन! हरि-चटसाल पढ़ाऊं।
गुरु की साटी, ग्यान का अच्छर,
बिसरै तौ सहज समाधि लगाऊं।।

संत दरिया साहब (बिहार वाले) ने सद्गुरु के शब्द को पहचानने पर जोर दिया है। सद्गुरु के शब्दों को नहीं पहचानने वाला पक्षियों में कौवे की तरह होता है –

कोठा महल अटारिया, सुनेउ स्त्रवन बहुराग।
सतगुरु सबद चीन्हें बिना, ज्यों पंछि मँह काग।।

संत रज्जब ने अपने 'सर्वंगी' ग्रंथ का प्रारंभ ही गुरु वंदना से किया है। प्रथम श्लोक में वे अपने गुरु दादूदयाल की वंदना करते हैं –

दादू नमो निरंजनं नमस्कार गुरु देवतह।
बंदनं श्रब साधवा प्रणामं पारंगतह।।

रज्जब कहते हैं कि एक ही अंत:करण के भीतर विविध प्रकार की अग्नियाँ होती हैं। यथा-क्रोधाग्नि, कामाग्नि आदि। सद्गुरु का अंत:करण इन सभी प्रकार की अग्नियों से परे होता है। उनका चित्त शांत होता है। उनके आदेश के अनुसार साधना करने से सभी प्रकार की अग्नि शांत होती है-

रज्जब अग्नि अनन्त हैं, एक आतमा मांहि।
सद्गुरु शीतल सर्वविधि, बहु वह्नि बुझ जांहि।।

संतों ने गुरु को भृंगी के समान कहा है। कबीर भी गुरु को भृंगी कहते हैं। भृंगी अपने अंडे के ऊपर गाते-गाते उसे भृंग बना देता है। फिर वह भी भृंगी बनकर गाने लगता है। रज्जब कहते हैं कि गुरु और भृंगी की तुलना किसी से भी नहीं की जा सकती। गुरु सामान्य से सामान्य मनुष्य को भी अपने आचरण और उपदेश से संत बना देता है-

गुरु भृंगी के कृत्य को, कृत्य न पूजै कोय।
रज्जब रचना राम की, ये ही पलटे दोय।।

मन में तमाम प्रकार के विष भरे होते हैं। विष के निस्तारण के बिना जीवन संभव नहीं है। सद्विवेक का प्रवेश तब तक नहीं हो सकता, जब तक शरीर शुद्ध न हो। साँप का जहर उतारने के लिए गारुड़ी की आवश्यकता होती है। शरीर का जहर तो विविध उपायों से निकाल सकते हैं, मन का विष तो गुरु ही निकाल सकता है। संत दादूदयाल कहते हैं-

मन भुवंग बहु विष भर्या, निर्बिष क्यूँहिं न होइ।
दादू मिल्या गुर गारूड़ी, निर्बिष कीया सोइ।।

मीरा को भक्ति उनके गुरु से प्राप्त हुई थी इसलिए वे सद्गुरु को कभी विस्मृत नहीं करतीं-

पायो जी मैंने राम रतन धन पायो। वस्तु अमोलक दी म्हारे सतगुरु किरपा करि अपणायौ।।

भारतीय परम्परा गुरु गोविंद की है। गुरु साक्षात परब्रह्म है। इस परम्परा के विघटन ने तमाम प्रकार की विकृतियों को जन्म दिया है। जीवन की एक मजबूत डोर गुरु है। वह ऐसा बंधन है जो मुक्त करता है। संस्कृत के आचार्यों ने तो 'गुरु सुश्रुषा विद्या' कहा। गुरु की सेवा से ही विद्या मिल जाती है। इसलिए एक पूर्णिमा गुरु को ही समर्पित है। आषाढ़ की पूर्णिमा-गुरु पूर्णिमा। तम के विनाश की पूर्णिमा। सकल प्रकाश की पूर्णिमा। ❑

(निदेशक, केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा)

वर्तमान परिदृश्य में गुरु शिष्य संबंध

❑ डॉ. ऋतु सारस्वत

शिक्षा की सारगर्भिता इस विचार में है कि व्यक्ति के व्यक्तित्व के सभी पक्षों का सर्वांगीण विकास हो, साथ ही एक ऐसी शिक्षा पद्धति का सर्जन हो जो बालक में आत्मविश्वास जाग्रत कर सके। वर्तमान शिक्षा पद्धति ने विद्यार्थी के भीतर इस दंभ का जाग्रत कर दिया है वह 'ज्ञानी' है, क्योंकि उसके लिए पाठ्यपुस्तकों को कंठस्थ कर लेना ही ज्ञान की सीमा है पर क्या इस दंभ के लिए बालक को दोषी ठहराया जा सकता है, कदापि नहीं। बालक तो मिट्टी के कच्चे घड़े के समान होता है जो विद्यालय और समाज की माटी से सृजित होता है। इन परिस्थितियों में शिक्षा-पद्धति को नवीन आयाम देकर एक ऐसे पर्यावरण को निर्मित करने की आवश्यकता है जहाँ शिक्षा थोपी न जाए वरन् सहजता से ग्रहण की जाए।

देश काल की सीमाओं से परे यह सत्य अकाट्य है कि शिक्षा के बिना मानव सर्जन संभव नहीं। मनुष्य की देह प्राप्त करना ईश्वरीय वरदान है परन्तु शिक्षा मनुष्य की 'आत्मा' का प्रस्फुटन है। शिक्षा को परिभाषित करने हेतु अनन्त व्याख्याएँ की गई हैं और इन सभी व्याख्याओं की पृष्ठभूमि में एक ही तत्त्व छिपा हुआ है वह है 'कल्याण' क्योंकि शिक्षा एक ऐसी प्रक्रिया है जो व्यक्ति की शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक शक्तियों को केन्द्रित कर दिशा देती है जिससे उसके तथा समाज के कल्याण हेतु विचारों और व्यवहार में परिवर्तन हो।

विश्व की सभी सभ्यताओं ने शिक्षा को मानवीय विकास के लिए अपरिहार्य माना है परन्तु इससे विपरीत भारतीय संस्कृति व्यक्ति और समाज में कोई विभेद करती दिखाई नहीं देती। यहाँ 'शिक्षा' व्यक्ति और समाज को आत्मसात् करते हुए देश के विकास का मार्ग प्रशस्त करती है। इस मार्ग के साधक है 'गुरु' एवं साध्य है 'शिक्षार्थी'। भारतीय संस्कृति की गुरु-शिष्य-परम्परा अद्भुत थी जहाँ शिष्य अपना सर्वस्व गुरु को अर्पित कर देता और गुरु का दायित्व अपने शिष्य का सर्वांगीण विकास था। गुरु और शिष्य के संबंधों के समक्ष सभी संबंध गौण थे। इस गुरु शिष्य परम्परा का निर्वाहन आश्रम-व्यवस्था के माध्यम से किया गया। वस्तुतः वैदिक संस्कृति का आधार स्तम्भ 'आश्रम व्यवस्था' रही जिसने मानव के जीवन को चार काल खण्डों में विभक्त किया। प्रथम और सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण खण्ड 'ब्रह्मचर्य-आश्रम' कहलाया। जहाँ बालक अपने माता-पिता के सामीप्य को तज कर शिक्षा-ग्रहण करने हेतु गुरु के आश्रम प्रस्थान करता था और वहीं से आरम्भ होता था उसके जीवन के उस काल का जहाँ वह स्वयं को जीवन की अनुकूल-प्रतिकूल परिस्थितियों और भावी संभावनाओं के मध्य खोजता हुआ व्यक्तित्व निर्माण करता है। जहाँ उसके लिए गुरु का आदेश शिरोधार्य होता था और गुरु के लिए शिष्य का उज्ज्वल भविष्य। गुरु की साधना वेदों के पठन-पाठन तक ही सीमित नहीं थी अपितु अपने शिष्य के ऐसे व्यक्तित्व का निर्माण करना था जो अपने बौद्धिक, चारित्रिक और आत्मिक विकास के बल पर राष्ट्र को विश्व के सर्वोत्कृष्ट शिखर पर स्थापित करे।

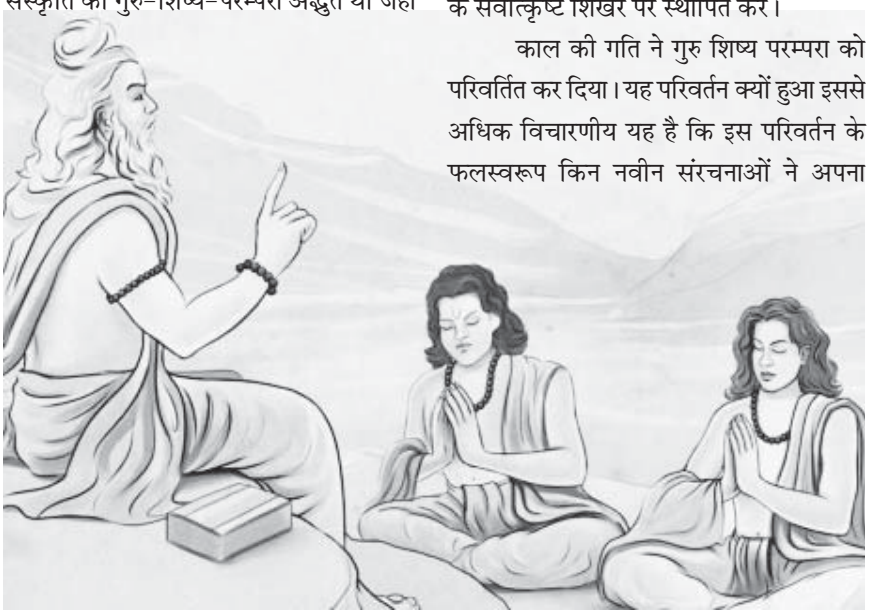

काल की गति ने गुरु शिष्य परम्परा को परिवर्तित कर दिया। यह परिवर्तन क्यों हुआ इससे अधिक विचारणीय यह है कि इस परिवर्तन के फलस्वरूप किन नवीन संरचनाओं ने अपना

आकार ग्रहण किया और क्या इस गुरु शिष्य परम्परा के क्षय से भारतीय संस्कृति का अहित हुआ? ये वे प्रश्न हैं? जिनके उत्तर को पाने के लिए गहन मंथन की आवश्यकता है। प्रथम प्रश्न का उत्तर स्पष्ट है है कि गुरु आश्रम में अपनी शिक्षा ग्रहण करते हुए जो शिक्षार्थी अपना जीवन गुरु के सानिध्य में व्यतीत करता था वहीं शिक्षार्थी अब निश्चित अवधि के लिए पाठशाला में जाकर शिक्षा ग्रहण करता। क्या 'पाठशाला' ने गुरु और शिष्य के संबंधों का अहित किया? क्या इसे रोका जा सकता था? क्या पाठशाला की परम्परा का आरम्भ हमारी भारतीय संस्कृति के सिद्धान्तों के विपरीत है? "You love to be practical in all spheres of work. The whole country has been ruined by masses of theories" स्वामी विवेकानन्द के ये शब्द स्पष्टत: अंकित हैं कि परिवर्तन प्रकृति एवं संस्कृति दोनों का ही अपरिहार्य अंग है और जितनी सहजता से हम इसे स्वीकार करेंगे। उतनी ही सरलता से हम बदले हुए स्वरूप के साथ सामन्जस्य स्थापित करने की चेष्टा करेंगे।

शिक्षा ग्रहण करने का मूल स्थापन यद्यपि गुरु आश्रम से परिवर्तित हो पाठशाला एवं महाविद्यालय में केन्द्रित हो गया तथापि इससे गुरु के दायित्वों और शिक्षार्थी के कर्त्तव्यों में परिवर्तन नहीं आया यह अवश्य हुआ कि उसकी क्रियान्विति परिवर्तित हो गई।

गुरु-शिष्य के संबंध में नकारात्मक ऊर्जा का प्रवाह रोकने का दायित्व प्रथम गुरु का ही है। स्वामी विवेकानन्द ने शिक्षा की वर्तमान परिस्थितियों पर कटाक्ष करते हुए कहा था ''शिक्षक के प्रति श्रद्धा, विनम्रता, समर्पण तथा सम्मान की भावना के बिना हमारे जीवन में कोई विकास नहीं हो सकता। उन देशों में जहाँ शिक्षक-शिक्षार्थी संबंधों में उपेक्षा बरती गई है वहाँ शिक्षक एक व्याख्याता मात्र रह गया है। वहाँ शिक्षक अपने लिए पाँच डालर की आशा रखने वाले और छात्र-शिक्षक के व्याख्यान को अपने मस्तिष्क में भरने वाले रह जाते हैं। इतना कार्य सम्पन्न होने पर दोनों अपनी राह पर चल देते हैं। इससे अधिक उनमें कोई संबंध नहीं रह गया।'' यह शब्द भारत में शिक्षा की बदलती तस्वीर का यथार्थ स्वरूप प्रतीत होता है। अत: आवश्यकता अब यहाँ यह है कि शिक्षकों को इस विचारधारा को तजना होगा कि पुस्तकों में लिखित ज्ञान को अपने शिक्षार्थियों को देना मात्र ही अपने कर्त्तव्यों की पूर्ति नहीं है आवश्यकता है कि शिक्षक यह जाने कि प्रत्येक बालक के भीतर ज्ञान का अपार भंडार है और वह बालक के भीतर व्याप्त ज्ञान का अनावरण करने वाला साधक है और इस सत्य को स्वीकारने के पश्चात् ही वह बालक के मनोभावों को समझ सकेगा। एक महत्त्वपूर्ण तथ्य यह भी है कि वर्तमान में शिक्षार्थी दिग्भ्रमित है क्योंकि उसका जीवन उद्देश्य स्पष्ट नहीं है। उसके इस दिग्भ्रम की स्थिति से शिक्षक ही मुक्ति दिला सकता है परन्तु दु:खद पहलू यह है कि स्वयं शिक्षक भी अपने दायित्व को विस्मृत कर चुके हैं। इस संदर्भ में श्री अरविंद घोष के विचार सारगर्भित हैं वे कहते हैं कि ''अध्यात्म का कर्त्तव्य है कि वह सुझाव दे और उनको छात्र पर थोपे नहीं। वह वास्तव में छात्र के अन्त:करण को प्रशिक्षित नहीं करता बल्कि विचार देता है कि वह अपने ज्ञान प्राप्त करने के साधन को किस प्रकार विकसित कर पूर्ण बनाए और साथ ही साथ छात्र को इस कार्य में सहायता दे और प्रोत्साहित करे। वह छात्र को ज्ञान नहीं देता बल्कि छात्र को यह दिखाता है कि वह स्वयं किस प्रकार ज्ञान को प्राप्त करे। वह उस ज्ञान को छात्र के समक्ष नहीं रखता जो उसमें निहित है बल्कि वह छात्र को केवल यह दिखाता है कि ज्ञान कहाँ है और वह सतह पर आने के लिए किस प्रकार अर्जित किया जावे।'' यह पंक्तियाँ वर्तमान परिस्थितियों को परिलक्षित नहीं करती अपितु इससे बिल्कुल विपरीत स्थिति हमारे सामने दृष्टिगोचर होती हैं आज का शैक्षणिक दृश्य इंगित करता है कि गुरु और शिष्य के मध्य एक ऐसे संबंध को जहाँ समर्पण, स्नेह विलुप्त हो चुका है। गुरु सिर्फ कक्षा में व्याख्यान देने वाला और शिष्य उसको ग्रहण करने वाला प्रतीत होता है। इन सभी परिस्थितियों के मध्य यह यक्ष प्रश्न है कि कैसे भारतीय संस्कृति की अनमोल धरोहर 'गुरु-शिष्य' के प्रगाढ़ संबंधों को पुन: लौटाया जा सकता है?

प्रथमत: शिष्य के भीतर इस विश्वास को जाग्रत करने की आवश्यकता है कि गुरु द्वारा प्रशस्त प्रत्येक मार्ग उसके हित में होगा। शिक्षा की सारगर्भिता इस विचार में है कि व्यक्ति के व्यक्तित्व के सभी पक्षों का सर्वांगीण विकास हो, साथ ही एक ऐसी शिक्षा पद्धति के सर्जन हो जो बालक में आत्मविश्वास जाग्रत कर सके। वर्तमान शिक्षा पद्धति ने विद्यार्थी के भीतर इस दंभ को जाग्रत कर दिया है वह 'ज्ञानी' है, क्योंकि उसके लिए पाठ्यपुस्तकों को कंठस्थ कर लेना ही ज्ञान की सीमा है पर क्या इस दंभ के लिए बालक को दोषी ठहराया जा सकता है, कदापि नहीं। बालक तो मिट्टी के कच्चे घड़े के समान होता है जो विद्यालय और समाज की माटी से सृजित होता है। इन परिस्थितियों में शिक्षा-पद्धति को नवीन आयाम देकर एक ऐसे पर्यावरण को निर्मित करने की आवश्यकता है जहाँ शिक्षा थोपी न जाए वरन् सहजता से ग्रहण की जाए। ❑

(व्याख्याता, राजकीय महाविद्यालय, पुष्कर)

यह सांस्कृतिक विलम्बन की स्थिति है। इसमें भौतिक संस्कृति, अभौतिक संस्कृति को पछाड़कर आगे निकल गयी है, लेकिन अभी भी मूल्यों का पूर्णतया ह्रास नहीं हुआ है। कोई कम्प्यूटर तकनीकी मानव के अनुराग, प्रेम, समर्पण व भावात्मक लगाव का स्थान नहीं ले सकती। सॉफ्टवेयर्स का निर्माण करने वाला भी मनुष्य ही है। ढ़ोंगियों की कतार से परे आज भी ऐसे महापुरुष हैं, जो सादा जीवन उच्च विचार को अपना आदर्श मानते हैं, पूर्ण समर्पण के साथ कर्त्तव्यनिष्ठा में लगे अपने धर्म का पालन करते हुए सत्य के मार्ग पर टिके हैं। उनका आदर्श वाक्य गीता में लिखा श्लोक 'कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन' है अर्थात् वे कल की इच्छा न रखकर कर्म में विश्वास करते हैं।

गुरु का महत्त्व

❑ डॉ. इन्दु बाला अग्रवाल

गुरुता, गुरुत्व, गौरव शब्द गुरु के व्यक्तित्व के साथ जुड़े हैं, जो गुरु शब्द की महानता व बड़प्पन को दर्शाते हैं। कहते हैं सही समय पर की गई एक सही चोट जीवन को परिवर्तित करने में मददगार सिद्ध हो सकती है। जब सब प्रयत्न व प्रयास निर्मूल सिद्ध हो जाते हैं, तब मार्गदर्शक का एक संकेत सही राह पर चलकर लक्ष्य-प्राप्ति हेतु दिशा दिखा सकता है। भारतवर्ष में जहाँ प्राचीनकाल से ही गुरु-शिष्य परम्परा रही है, गुरु का स्थान परमात्मा से भी ऊपर बताया गया है। गुरु के सान्निध्य व सत्संग से ईश्वर व मोक्ष की प्राप्ति संभव हो सकती है। उपनिषद् से लिया गया यह श्लोक काफी प्रासंगिक है, जिसमें ईश्वर से सही मार्ग दिखाने की प्रार्थना की गई है।

''असतो मा सद्गमय।
तमसो मा ज्योतिर्गमय।।
मृत्योर्मा मृतं गमय।''

हे प्रभु! मुझे असत्य से सत्य की ओर, अन्धेरे से उजाले की ओर, मृत्यु से अमरत्व की ओर ले जाने का मार्ग प्रशस्त करो। ईश्वर के प्रतिनिधि के रूप में यही कार्य गुरु भी करता है। गुरु की इसी महिमा को कबीर जी इस दोहे में यों कहते हैं-

गुरु कुम्हार सिस कुंभ है, गढ़ि गढ़ि काढ़ै खोट।
अन्तर हाथ सहार दे, बाहर बाहै चोट।।

अर्थात् गुरु कुम्हार की भाँति और शिष्य मिट्टी के कच्चे घड़े के समान है। जिस प्रकार कुम्हार घड़े को सुन्दर बनाने के लिए अन्दर हाथ डालकर बाहर से थाप मारता है। ठीक उसी प्रकार गुरु शिष्य को कठोर अनुशासन में रखते हुए अन्तर में प्रेम भावना रखकर शिष्य की बुराइयों को दूर करके संसार में सम्मानीय बनाता है। गुरु के प्रति पूर्ण समर्पण व आस्था ही उज्ज्वल भविष्य का मार्ग प्रशस्त करते हैं।

दूसरी तरफ, संसार की भौतिकता, नश्वरता जिसको प्राणी समझ नहीं पाता, सांसारिक मोह माया में डूब कर भौतिक सुखों

की प्राप्ति को ही अपना अन्तिम लक्ष्य मानकर झंझावातों व भँवरों में फँसा रहता है। उससे उबर नहीं पाता, बाहर नहीं निकल पाता। ऐसे समय में, जब पाप व दुराचार बढ़ते जा रहे हैं, लोग गुरु व गुरु की महत्ता को नकार रहे हैं। गुरु से तात्पर्य मात्र अपनी आजीविका चलाने वाला वेतन भोगी शैक्षिक कर्मचारी मात्र रह गया है। सॉफ्टवेयर के जमाने में कम्प्यूटर तकनीकी विकसित होने पर ज्ञान के सागर गूगल बाबा बन गए हैं। हर प्रश्न के सैंकड़ों जवाब एक क्लिक में हाजिर हैं, यू ट्यूब पर लगभग हर विषय पर वीडियो उपलब्ध हैं। विद्यार्थी वेतन भोगी अध्यापकों से समाधान के स्थान पर इन संसाधनों को तरजीह देने लगे हैं। भावात्मक रिश्ते, भावात्मक लगाव, सही गलत की परख को दरकिनार कर अध्यापक के ज्ञान की परीक्षा ली जाती है व उसका मजाक उड़ाया जाता है। समर्पण का स्थान अपेक्षाओं ने हस्तगत कर लिया है, लेन-देन रिश्तों का आधार बन गया है, गुरु-शिष्य परम्पराएँ चन्द मुट्ठी भर लोगों की संवेदनाओं के साथ सिमट कर रह गयी हैं। कुछ नापाक इरादों वाले अध्यापकों की कुत्सित प्रवृत्तियों के कारण गुरु रूपी संस्था का अपमान हुआ है। ढ़ोंगी बाबा गली-गली में परमात्मा बने बैठे हैं, जिनको लोग गलती से गुरु मानकर उनकी सलाहों पर अमल करते हैं व पथ भ्रष्ट होते हैं।

अध्यापक का दर्जा गुरुपद से हटाकर फेसिलिटेटर (सहजकर्त्ता) का दे दिया गया है, जिसका कार्य अधिगम परिस्थितियाँ प्रदान करना रह गया है। कोचिंग संस्थान जो लूट के अड्डे बने हैं, गुरु शिष्य के भावात्मक लगाव से परे धन कमाने की लिप्सा में लिप्त हैं। आज का बालक गुरु का मतलब ही नहीं समझ पाता और गुरु की देहरी पर ज्ञान प्राप्ति दिवास्वप्न है।

यह सांस्कृतिक विलम्बन की स्थिति है। इसमें भौतिक संस्कृति अभौतिक संस्कृति को पछाड़कर आगे निकल गयी है, लेकिन अभी भी मूल्यों का पूर्णतया ह्रास नहीं हुआ है। कोई कम्प्यूटर तकनीकी मानव के अनुराग, प्रेम, समर्पण व भावात्मक लगाव का स्थान नहीं ले सकती। सॉफ्टवेयर्स का निर्माण करने वाला भी मनुष्य ही है। ढ़ोंगियों की कतार से परे आज भी ऐसे महापुरुष हैं, जो सादा जीवन उच्च विचार को अपना आदर्श मानते हैं, पूर्ण समर्पण के साथ कर्त्तव्यनिष्ठा में लगे अपने धर्म का पालन करते हुए सत्य के मार्ग पर टिके हैं। उनका आदर्श वाक्य गीता में लिखा श्लोक 'कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन' है अर्थात् वे फल की इच्छा न रखकर कर्म में विश्वास करते हैं। ऋषि दधीचि के समान अपना सब कुछ उत्सर्ग कर प्राण प्रण से अनाम समाज की सुव्यवस्था में अपना योगदान दे रहे हैं। नींव बनकर बगैर कंगूरा बनने की चाहत लिए अपने कर्मों से लोगों का मार्ग प्रशस्त कर रहे हैं। आवश्यकता है ऐसे गुरु को तलाशने की, जो वांछित दिशा में ले जाने का मार्ग प्रशस्त कर सके, सत्य को सत्य कह सकने की हिम्मत रख सके। सुकरात, ईसामसीह, रामकृष्ण परमहंस आदि ऐसे ही महान गुरु हुए हैं। उन्होंने अपने शिष्यों के अक्षम्य अपराधों को अपने प्राण देकर भी क्षमा कर दिया। 'ईसामसीह को जब सूली पर चढ़ा रहे थे तब उनके शब्द थे, ''प्रभु उन्हें माफ करना। वे नहीं जानते कि वे क्या कर रहे हैं।'' अध्यापक से गुरु बनने हेतु अदम्य साहस व समर्पण एवं विशाल हृदय की आवश्यकता है। बच्चा जब विद्यालय में प्रवेश लेता है तो अध्यापकों के व्यक्तित्व में अपने अस्तित्व को तलाशता है। उनके व्यक्तित्व से प्रभावित होता है और उनके व्यक्तित्व को अपने जीवन में उतारने का प्रयास करता है। अध्यापकों के जीवन चरित्र का उनके कोमल हृदय व मस्तिष्क पर गहरा प्रभाव पड़ता है। वे अध्यापक के चश्मे से संसार की सत्यता को भाँपने का प्रयास करते हैं। चन्द लोगों के गलत व कुत्सित कार्यों से गुरु के महत्त्व में कमी नहीं होती। गुरु के महत्त्व को दर्शाती शिष्यों की भावनाओं की ये दो पँक्तियाँ हैं

You are the ocean of love,
we require only one drop of
water to convert into a Pearl.

''तू प्यार का सागर है, तेरी एक बूँद के प्यासे हम।''

गुरु शिष्य के आत्मिक संबंध मात्र दिखावटी नहीं हैं। सच्चे ज्ञान की प्राप्ति गुरु के दिशा निर्देशन के बिना संभव नहीं है। ये जरूरी नहीं है कि गुरु आपका विद्यालय अध्यापक ही हो। जो आपको वांछित, दिशा या मार्ग सुझा सके, वही आपका गुरु है। सच्चे गुरु की पहचान बहुत आवश्यक है। सच्चा गुरु व्यक्ति के सम्पूर्ण व्यक्तित्व के विकास में मार्गदर्शन करता है। गुरु वह है, जो गुरु की भावना से भावित हो और व्यक्ति की क्षमता को निखार सके। गुरुओं की महानता को सम्मान दिलाना समाज का भी कर्त्तव्य है। ❑

(पूर्व तदर्थ व्याख्याता,
क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान, अजमेर)

गुरु बिनु भव निधि तरहि न कोई

❑ बजरंग प्रसाद मजेजी

गुरु ही एक मात्र ऐसा व्यक्ति होता है जो शिष्य को स्वयं से बढ़कर उन्नत बनाना चाहता है। इसके लिए गुरु शिष्य को बाहर हाथ से सहारा देकर अंदर से शिष्य के दोषों को निकालने के लिए चोट करता है तथा उसके मनुष्यत्व का निर्माण करता है। गुरु कुम्हार सिस कुम्भ है, गढि गढि काढे खोट शिक्षा व्यवस्था की सफलता अच्छी पाठ्यचर्या के निर्माण व उसके सही क्रियान्वन पर निर्भर करती है। स्कूली शिक्षा की राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2000 में इस बात पर चिन्ता प्रकट की गई है कि पाठ्यचर्या के क्रियान्वयन की सम्पूर्ण जिम्मेदारी तो स्कूल-शिक्षकों की होती है मगर पाठ्यचर्या निर्धारण में स्कूल-शिक्षकों की भूमिका बहुत कम होती है। स्कूल-शिक्षकों को पाठ्यचर्या निर्धारक नहीं मान पाठ्यचर्या का संवाहक मात्र माना जाता है। सच तो यह है कि शिक्षा प्रशासन अधिकांश स्कूल शिक्षकों को पाठ्यचर्या निर्धारण के योग्य ही नहीं मानता।

भारतीय संस्कृति की विशेषता और महत्ता यहाँ की प्राचीन गुरु-शिष्य परंपरा है। तैत्तिरीय उपनिषद् ने 'आचार्य देवो भव:' कहकर गुरु को भगवान के समकक्ष प्रतिष्ठित किया। गुरु को न केवल ब्रह्मा-विष्णु-महेश अपितु साक्षात् परब्रह्म बताते हुए भारतीय जनमानस को गुरु के प्रति नतमस्तक होने का भाव दिया है-

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विर्ष्णु गुरुर्देवो महेश्वर:
गुरु र्साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्री गुरवे नम:।

तुलसीदास ने भारतीय संस्कृति ही नहीं अपितु विश्व संस्कृति एवं इतिहास में आचार्य महर्षि, उपाध्याय, गुरु को ज्ञानप्रदाता अज्ञाननाशक, तिमिरहर्ता, ब्रह्मस्वरूप दर्शयिता 'गुरु' का सम्मान देते हुए नमन किया है। संसार में सन्मार्ग दिखाने वाला गुरु ही है। रामचरित मानस में तुलसीदासजी ने भी लिखा है कि

गुरु बिन भव निधि तरहि न कोई
जो विरंचि शंकर सम होई।

गोस्वामी तुलसीदास जी ने रामचरित मानस के प्रारंभ में ही गुरु वंदना करते हुए कहा है कि गुरुचरण कमलों की धूलि से मैं अपने मन रूपी दर्पण को स्वच्छ कर, रघुवर के उस विमल यश का वर्णन करता हूँ जो चारों फलों को देने वाला है। इसमें छिपा हुआ संदेश है कि गुरु चरणों की धूल साधारण नहीं है वरन् यह परम शक्ति रूपा 'शिक्षा' ही है जो मानव के अन्तरमन रूपी दर्पण को स्वच्छ रखने में सक्षम है-

श्री गुरु चरण सरोज रज, निज मनु मुकुरु सुधारी।
वरनउँ रघुवर विमल यश जो दायकु फल चारि।।

यही नहीं तुलसीदास जी ने गुरु की महिमा वर्णित करते हुए उसके चरणों की रज को अमरमूल अर्थात् संजीवनी जड़ी कहा है। तात्पर्य यह है कि गुरु यदि स्वयं को समर्थ बना ले उसके चरणों की धुलि अर्थात् आंशिक कृपा भी शिष्य को अमर बनाने में समर्थ है। उनके अनुसार गुरु का अंग-अंग शिष्य के लिए सुरुचि पूर्ण, सुगन्ध तथा अनुराग से पूर्ण हो, जो स्वयं को अपने शिष्यों के लिए इतना प्रेमपूर्ण सम्बन्ध बना लेता है कि उसकी प्रदान की गई शिक्षा कभी व्यर्थ नहीं जाती।

बंदउँ गुरु पद परम परागा।
सुरुचि सुबास सरस अनुरागा।
अमिय मूरिमय चूरन चारू।
समन सफलं भव रुज परिवारु।।

गुरु महिमा बताते हुए कबीरदास ने लिखा है कि सारी पृथ्वी को कागज बनाकर, सभी वृक्षों को लेखनी बनाकर और सातों समुद्रों के जल से स्याही बनाकर गुरु महिमा को लिखा जाए तो भी संभव नहीं है, क्योंकि सद्गुरु से ही सच्चा ज्ञान और परमात्मा की प्राप्ति होती है-

सब धरती कागद करूँ,
लेखनि सब बनराय,
सात समुद्र की मसि करूँ,
गुरु गुन लिखा न जाए।

गुरु शब्द की उत्पत्ति गु रु दो अक्षरों के संयोग से हुई है! 'गु' का अर्थ अंधकार और 'रु' का अर्थ प्रकाश है। इसका अर्थ है कि जो हमें अंधकार से प्रकाश की ओर ले जाए अर्थात् ज्ञान की ओर ले जाए वही गुरु है। जो जीवन जीने का गुर अर्थात् सूत्र बताये वही गुरु है।

गु इति अन्धकार: रु तस्य निरोधक
अन्धकारस्य निरोधित्वाद् गुरु: इति उच्यते।

गुरु शब्द की अन्य व्याख्या के व्यंजनों एवं स्वरों से करें तो गुरु शब्द ग् उ र उ से बना है। जिसका 'ग' अर्थात् सिद्धि देने वाला 'र' अर्थात् पाप को हरण करने वाला तथा उ अर्थात् विष्णु र गुणवान) बनाता है-

ग कार: सिद्धि: प्रोक्तोरेफ: पापस्य हारक:।
उकारो विष्णुख्यिक्तस्त्रितयात्मा गुरु: पर:।।

तुलसीदास जी ने गुरु शब्द का भावार्थ लिखते हुए कहा है कि गुरु कोई व्यक्ति नहीं अपितु शिक्षा का पर्यायवाची है। शिक्षा और गुरु की सर्वोच्चता को अन्तरमन से स्वीकार करते हुए इन्हें मनुष्य रूप में हरि अर्थात् सर्वशक्तिमान, अज्ञान, अभाव व महामोह के घनघोर अंधेरे को नष्ट करने

में सूर्य किरण समूह है।

बंदउँ गुरु पद कंज कृपा ,सिन्धु नर रूप हरि।
महामोह तम पुंज जासु वचन रवि कर निकर।।

प्राचीन काल में आचार्य शिष्यों के अज्ञान को सदुपदेशों द्वारा दूर करने, धर्म से सम्बन्धित गूढ़ तथ्यों तथा उपदेशों की सरल व्याख्या करने में शिष्य का मार्गदर्शन करते थे। शिष्टाचार, सदाचार और अनुशासन की शिक्षा गुरु के कठोर परन्तु स्नेहमय वातावरण से सम्पन्न होती थी। आत्मिक निकटता, श्रद्धा व स्नेहपूर्ण गुरु–शिष्य सम्बन्ध शिक्षा का आधार था। जीवन में सफलता का मंत्र शिक्षा है, जो हममें सकारात्मक भाव उत्पन्न करती है और नैराश्य के सागर से निकालकर आशावादिता से जोड़ती है। गुरु, आचार्य, महर्षि, उपाध्याय, शिक्षक, अध्यापक सभी समानार्थक शब्द हैं। जो वेद शास्त्रों का अथवा किसी भी प्रकार का ज्ञानोपदेश करता है, शिष्यों से सम्मान पाता है, उसे गुरु कहते हैं।

गृणाति उपदिशति वेदशास्त्राणि
यदा स्तूयते शिष्यवर्ग।

सद्गुरुओं में ये मनोभाव सदैव विद्यमान रहते हैं कि हमने जिस विषय का ज्ञान प्राप्त कर लिया है, उसे सम्पूर्ण रूप से शिष्य को देना स्वयं का कर्तव्य मानते हैं। सद्गुरु के मार्गदर्शन में ही व्यक्ति की अन्तर्निहित आत्मिक शक्तियों का प्रस्फुटीकरण होता है, जो शिष्य को सन्मार्ग पर चलने हेतु प्रवृत्त करता है, वह गुरु है–

गुरी उद्यमेन गुरते सत्पथे प्रवर्तयति (शिष्यम्) इति गुरु–

अज्ञानान्धकार को दूरे करने वाला गुरु कहलाता है।

गुं हृदयान्धकारं रावयति दूरी करोतीति गुरु।

जो ज्ञान देता है वह गुरु है, जो अज्ञान को दूर करता है वह गुरु है।

ददाति ज्ञानम् इति गुरु। गीरति अज्ञानम् इति गुरु।

गुरु की संगति

आदि शंकराचार्य ने कहा है कि –

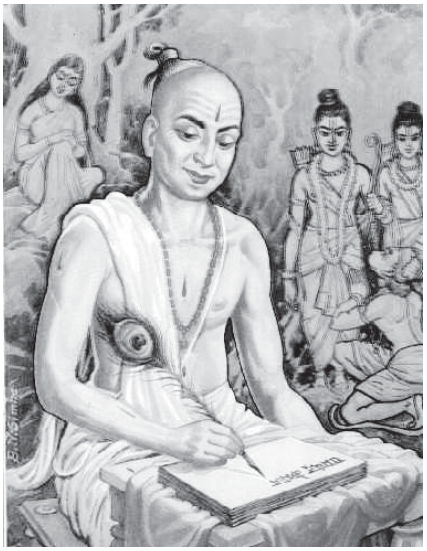

'सच्चा गुरु वह है जो स्वयं आत्मज्ञानी हो, जिसकी कृपा से संसार तापजन्य श्रम से दूर होकर शिष्य अखण्ड, एकरस, अद्वितीय, नित्य, सर्वव्यापी, आनन्दमय, अक्षय परमपद को प्राप्त करता हुआ, आत्मा के साथ ऐक्य की अनुभूति कर लेता है।' गुरु ही एक मात्र ऐसा व्यक्ति होता है जो शिष्य को स्वयं से बढ़कर उन्नत बनाना चाहता है। इसके लिए गुरु शिष्य को बाहर हाथ से सहारा देकर अंदर से शिष्य के दोषों को निकालने के लिए चोट करता है तथा उसके मनुष्यत्व का निर्माण करता है। गुरु कुम्हार सिस कुम्भ है, गढि गढि काढे खोट शिक्षा व्यवस्था की सफलता अच्छी पाठ्यचर्या के निर्माण व उसके सही क्रियान्वन पर निर्भर करती है। स्कूली शिक्षा की राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2000 में इस बात पर चिन्ता प्रकट की गई है कि पाठ्यचर्या के क्रियान्वयन की सम्पूर्ण जिम्मेदारी तो स्कूल–शिक्षकों की होती है मगर पाठ्यचर्या निर्धारण में स्कूल–शिक्षकों की भूमिका बहुत कम होती है। स्कूल–शिक्षकों को पाठ्यचर्या निर्धारक नहीं मान पाठ्यचर्या का संवाहक मात्र माना जाता है। सच तो यह है कि शिक्षा प्रशासन अधिकांश स्कूल शिक्षकों को पाठ्यचर्या निर्धारण के योग्य ही नहीं मानता। ऐसा करके प्रशासन स्वयं को कटघरे में खड़ा करता है क्योंकि शिक्षकों के चयन व प्रशिक्षण के सभी अधिकार प्रशासन के पास है। अन्दर हाथ सहार के, बाहर बाहे चोट।

त्याग के विस्मयकारी एवं उज्ज्वल गुण के कारण शिक्षक लोक कल्याण के लिए शिष्य को शिक्षा प्रदान करता है तथा शिक्षार्थी एवं समस्त लोक का मंगल करता है। ऐसा शिक्षक जो स्वयं प्रतिभाशाली, विनम्र, संयम, जिज्ञासु आदि गुणों से युक्त हैं, अपने शिष्य सर्वस्व देने को तत्पर रहता है। गुरु के लिए स्वयं के पुत्र और शिष्य में कोई भेद नहीं होता है। वह समान व्यवहार कर, पुत्रवत स्नेह देकर, शिष्य को सर्वहितकारी ज्ञान का अवदान करता है।

यथा पुत्रस्तथा शिष्यो न भेदः पुत्रशिष्ययो

संसार में प्रायः मानव दूसरों की उन्नति देखकर प्रसन्न नहीं होता, किन्तु गुरु ऐसा व्यक्तित्व है जो अपने शिष्य की उन्नति में सदा गौरव का अनुभव करता है। यही उसकी गरिमा है, जो उसे सामान्य से विशेष बनाती है। ऐसा शिक्षक शिष्य के लिए भी सर्वस्व है ऐसा वेद कहते हैं–

गुरुरेव परब्रह्म गुरुरेव परा गति।
गुरुरेव परा विद्या, गुरुरेव परंधनम्।।

राष्ट्र में तपोनिष्ठ, नैतिक मूल्यों से अनुप्राणित, सुसंस्कृत, बहुमुखी व्यक्तित्व के धनी आचार्य गौतम, कश्यप, वशिष्ठ, विश्वामित्र, परशुराम, द्रोणाचार्य, सन्दीपनी, शंकराचार्य, रामकृष्णपरमहंस, रामानन्द, चाणक्य जैसे प्रातः स्मरणीय गुरु हुए हैं जिन्होंने शिक्षा व समाज को दिशा दी थी। वर्तमान शिक्षकों को उनके चरित्र का अध्ययन कर राष्ट्र के उत्थान में शिक्षा की अलख जगाते हुए शिक्षार्थियों को मानवीय एवं नैतिक मूल्यों से युक्त संभ्रान्त नागरिक बनाने में योगदान दे, शिक्षकों से ऐसी अपेक्षा है। ❑

(स्वतन्त्र लेखक)

गुरुता का अहसास कराना होगा

❑ विष्णुप्रसाद चतुर्वेदी

व्यक्ति के जीवन पर गुरु के प्रभाव को स्वीकार कर भारत में गुरु को पूजनीय माना गया है। गुरु पूर्णिमा पर्व पर गुरु का पूजन करने की परम्परा अतिप्राचीनकाल से चली आ रही है। कई लोगों को यह परम्परा मात्र औपचारिकता लग सकती है क्योंकि आज न तो गुरुकुल रहे हैं और न ही गुरु। गुरुकुलों का स्थान स्कूलों ने ले लिया है और गुरु के स्थान पर वेतन भोगी शिक्षक आ गए हैं। ऐसे में यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि आज के युग में गुरु के गुणगान क्यों और कौन गाए?

यह सही है कि आज वह जमाना नहीं रहा जो प्राचीनकाल में या कुछ सदियों पूर्व था। अब तो सदियाँ छोड़ दशकों में ही बहुत कुछ बदल जाता है, मगर यह पूर्ण सत्य नहीं है। कुछ बातें है जो प्रारम्भ से अब तक यथावत चली आ रही है। उनमें कुछ भी नहीं बदला है। जीवन की इकाई, कोशिका में अरबों वर्ष से कुछ नहीं बदला है। कोशिका की संरचना आज भी वही है जो उसकी उत्पति के समय थी। इसी तरह मानव की आनुवंशिकता भी नहीं बदली है। मानव के पर्यावरण में बहुत परिवर्तन आया है मगर संरचना की दृष्टि से मानव आज भी वही है जो उत्पति के समय था। मानव जीवन में शिक्षा व जीवन मूल्यों का महत्त्व आज भी वही है जो पूर्व के किसी समय में था।

शिक्षकों की भीड़ के बीच गुरु आज भी पाए जाते हैं तथा वे बच्चे के जीवन को उसी प्रकार प्रभावित करते हैं जैसे किसी पूर्व समय में करते थे। प्रकट हो या नहीं हो मगर गुरु के व्यक्तित्व का अमिट प्रभाव बच्चे के जीवन पर आज भी होता है। अपनी इस सोच के पक्ष में मैं एक विश्व स्तरीय हस्ती का उदाहरण देना चाहूँगा। ख्याति प्राप्त सृष्टि वैज्ञानिक स्टेफेन हॉकिंग्स के नाम से लगभग हम सभी परिचित हैं। शरीर से अत्यधिक दिव्यांग होते हुए भी अपने उर्वर मस्तिष्क के कारण विश्व को नया सोच देते रहते हैं। स्टेफेन हॉकिंग्स ने अपनी उन्नति का श्रेय सन्त अल्बंस स्कूल में उनके शिक्षक रहे डिकरान टहटा को देकर यह प्रमाणित किया है कि अतिआधुनिक कहे जाने वाले समाज में भी गुरु से प्रभावित होने की परम्परा जीवित है।

स्टेफेन हॉकिंग्स ने यह स्वीकारोक्ति लंदन के गणित शिक्षक कोलिन हेगार्टी के वैश्विक सम्मान समारोह के अवसर पर की। स्टेफेन हाकिंग्स ने विडियो कॉन्फ्रेंसिंग के माध्यम से समारोह को संबोधित किया था। केम्ब्रिज विश्वविद्यालय में गणित के प्रोफेसर पद को बहुत महत्त्वपूर्ण माना जाता है क्योंकि महान् वैज्ञानिक आइजक न्यूटन एक समय उस पद पर रहे थे। स्टेफेन हॉकिंग्स का कहना है कि केम्ब्रिज विश्वविद्यालय

शिक्षा व्यवस्था की सफलता अच्छी पाठ्यचर्या के निर्माण व उसके सही क्रियान्वन पर निर्भर करती है। स्कूली शिक्षा की राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2000 में इस बात पर चिन्ता प्रकट की गई है कि पाठ्यचर्या के क्रियान्वयन की सम्पूर्ण जिम्मेदारी तो स्कूल-शिक्षकों की होती है मगर पाठ्यचर्या निर्धारण में स्कूल-शिक्षकों की भूमिका बहुत कम होती है। स्कूल-शिक्षकों को पाठ्यचर्या निर्धारक नहीं मान पाठ्यचर्या का संवाहक मात्र माना जाता है। सच तो यह है कि शिक्षा प्रशासन अधिकांश स्कूल शिक्षकों को पाठ्यचर्या निर्धारण के योग्य ही नहीं मानता। ऐसा करके प्रशासन स्वयं को कटघरे में खड़ा करता है क्योंकि शिक्षकों के चयन व प्रशिक्षण के सभी अधिकार प्रशासन के पास है।

में गणित का प्रोफेसर बनाने का सारा श्रेय उनके स्कूल शिक्षक डिकरान टहटा को है। हॉकिन्स ने श्रोताओं को बताया कि स्कूल में उनकी लिखावट बहुत खराब थी। वे आलसी प्रवृति के छात्र थे। यह डिकरान टहटा के शिक्षण का प्रभाव ही था कि उनमें गणित के अध्ययन के प्रति रुचि उत्पन्न हुई। हॉकिंग्स का कहना है कि उस स्कूल में अधिकांश शिक्षक बोर करने वाले थे मगर डिरकान सबसे अलग थे। डिकरान टहटा की कक्षाएँ जीवन्त व जिज्ञासा जगाने वाली होती थी। कक्षा में हर विषय पर वाद-विवाद किया जा सकता था। हॉकिंग्स व उनके साथियों ने, विद्युत व यांत्रिक स्विचों पर आधारित अपना पहला कम्प्यूटर, डिकरान टहटा की कक्षा में बनाया था। प्रोफेसर स्टेफेन हॉकिन्स केवल अपने गुरु की ही प्रशंसा ही नहीं अपितु गुरु की उपस्थिति का सामान्यीकरण भी किया। हॉकिंग्स ने स्थापित किया कि हर प्रतिभावान व्यक्ति के पीछे एक प्रतिभावान शिक्षक (गुरु) होता है। हमारे देश में भी ऐसे अनेक उदाहरण देखे जा सकते हैं।

महत्त्वपूर्ण है स्कूली शिक्षा

व्यक्ति को सफल बनाने में संस्कारों की भूमिका प्रमुख होती है। संस्कार बचपन में पड़ते हैं। बचपन घर से प्रारम्भ होकर स्कूल तक जाता है। जीवन में प्रवेश करने हेतु 10 वर्षीय माध्यमिक शिक्षा को आज सम्पूर्ण विश्व में अनिवार्य रूप से स्वीकार किया गया है। स्पष्ट है कि यदि सुसंस्कृत समाज विकसित करना है तो माध्यमिक शिक्षा को मजबूत करना होगा। माध्यमिक शिक्षक को इतना सक्षम बनाना होगा कि वे अपने गुरुत्व से बच्चों को प्रभावित कर उन्हें सुसभ्य नागरिक विकसित होने के पथ पर मोड़ सके। संस्कार पुस्तकों से नहीं पढ़ाए जाते, संस्कार गुरु के व्यवहार को देखकर सीखे जाते हैं।

उपेक्षित हैं स्कूली शिक्षक

हमारे देश में स्कूली शिक्षक, शैक्षिक दृष्टि से मजबूत नहीं बन पाया। इसका एक बड़ा कारण देश के आजाद होने से पूर्व ही देश की स्कूली शिक्षा पर उच्च शिक्षा का हावी हो जाना है। परिणाम यह हुआ कि माध्यमिक शिक्षा जीवन में प्रवेश करने का मार्ग बनने के बजाय उच्च शिक्षा में प्रवेश का मार्ग बन कर रह गई। शिक्षा व्यवस्था की इस कमजोरी को आजादी के आन्दोलन के दौरान ही भाँप लिया गया था। डा.लक्ष्मणस्वामी मुदालियर की अध्यक्षता में बने माध्यमिक शिक्षा आयोग ने सुधार के सुझाव दिए मगर अंग्रेजी मानसिकता के प्रशासन ने उन्हें ठीक से क्रियान्वित नहीं किया। 70 वर्ष बाद आज भी वही स्थिति बनी हुई है। माध्यमिक शिक्षा अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने में असमर्थ रही।

शिक्षा व्यवस्था की सफलता अच्छी पाठ्यचर्या के निर्माण व उसके सही क्रियान्वन पर निर्भर करती है। स्कूली शिक्षा की राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2000 में इस बात पर चिन्ता प्रकट की गई है कि पाठ्यचर्या के क्रियान्वयन की सम्पूर्ण जिम्मेदारी तो स्कूल-शिक्षकों की होती है मगर पाठ्यचर्या निर्धारण में स्कूल-शिक्षकों की भूमिका बहुत कम होती है। स्कूल-शिक्षकों को पाठ्यचर्या निर्धारक नहीं मान पाठ्यचर्या का संवाहक मात्र माना जाता है। सच तो यह है कि शिक्षा प्रशासन अधिकांश स्कूल शिक्षकों को पाठ्यचर्या निर्धारण के योग्य ही नहीं मानता। ऐसा करके प्रशासन स्वयं को कटघरे में खड़ा करता है क्योंकि शिक्षकों के चयन व प्रशिक्षण के सभी अधिकार प्रशासन के पास है। 2005 की पाठ्यचर्या रूपरेखा में इस तथ्य को स्वीकार करते हुए कहा गया कि शिक्षा की कोई व्यवस्था अपने अध्यापकों की श्रेष्ठता से ऊपर नहीं उठ सकती। अध्यापकों की श्रेष्ठता उन्हें चुनने के साधन, प्रशिक्षण प्रक्रिया और उत्तरदायित्व को सुनिश्चित करने के लिए प्रयुक्त नीतियों पर निर्भर करती है। 1985 में भारत सरकार द्वारा प्रकाशित शिक्षा की चुनौतियाँ दस्तावेज में कहा गया है कि शिक्षकों का चयन योग्यता के आधार पर नहीं होता। इस कारण बड़ी संख्या में ऐसे लोग शिक्षक बन जाते हैं जिनमें शिक्षण की क्षमता व प्रवृति नहीं होती। शिक्षण प्रशिक्षण के लिए चुनते समय भावी शिक्षक में संकल्पनात्मक स्पष्टता, जिज्ञासा, पहल करने की क्षमता, वैज्ञानिक प्रवृति, शारीरिक दक्षता, भाषिक कौशल, प्रभावी वक्ता व लेखन के गुणों की जाँच नहीं की जाती है। शिक्षक के संप्रेषण कौशल के विकास पर ध्यान नहीं दिया जाता जो शिक्षक का कार्य करने के लिए सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण गुण है।

गुरु में विश्वास जताना होगा

विश्व में आज स्थितियाँ बदल रही है। शिक्षकों की उपेक्षा करने के स्थान पर उन्हें स्कूल स्तर पर पाठ्यचर्या निर्माण हेतु प्रोत्साहित किया जा रहा है। शिक्षा में विकेन्द्रीकरण को स्कूल स्तर तक ले जाया जा रहा है, ऐसे में भारत में भी पाठ्यचर्या निर्माण में शिक्षकों की भूमिका बढ़ाई जानी चाहिए। यह तभी संभव होगा जब उन्हें परिवर्तित भूमिका निभाने के अधिकार दिए जाएँ। देश के शिक्षक वर्ग की योग्यता पर विश्वास जताना होगा। पाठ्यचर्या निर्माण की जिम्मेदारी अनुभव होने पर शिक्षकों में व्यावसायिक प्रेरणा उत्पन्न हो सकेगी। पाठ्यचर्या रूपरेखा 2000 में अपेक्षा की गई है कि शिक्षकों में 'नौकर' होने के स्थान पर 'मालिक' होने का भाव जगाना होगा। इस बात को कहे 17 वर्ष का समय गुजर गया मगर कुछ परिवर्तन होता दिखाई नहीं देता। हमारे सभी आदर्श मात्र कागजों में सिमट कर रह जाते हैं। व्यवहार में नहीं ढल पाते क्योंकि निर्णय लेने वालों की मानसिकता यथास्थितिवादी रही है। यदि सचमुच परिवर्तन करने हैं तो सरकार को कठोर निर्णय लेकर उनका क्रियान्वयन सुनिश्चित करना होगा। माध्यमिक शिक्षा पर किए खर्च को इनवेस्टमेन्ट माना जाना चाहिए क्योंकि सही नागरिक तैयार होने पर कई तरह के खर्च कम हो जाते हैं। शिक्षक को गुरु कहने से कार्य नहीं चलेगा, गुरु को गुरुता का अहसास भी कराना होगा। ❑

(बाल साहित्य एवं विज्ञान विषयक लेखक)

विद्या प्रदाता तारणहार गुरु

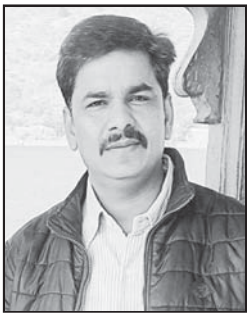

आज का शिक्षक जब अपने जीवन का उद्देश्य शिष्य का सर्वाङ्गीण विकास मानें तभी वह गुरु बन पायेगा एवं गुरु के उच्च आदर्शों से युक्त महत्त्व को अंगीकार करने पर ही उसे आत्मिक संतुष्टि का अनुभव होगा क्योंकि गुरु कोई सामान्य व्यक्ति नहीं है अपितु वह परमात्मा से भी बढ़कर है वह ही इस संसार सागर से तारणहार है प्रत्यक्ष है अतः कबीरदास जी ने कहा है कि वे लोग मूर्ख हैं जो गुरु में सामान्य मनुष्य की बुद्धि रखते हैं क्योंकि परमात्मा भी रूठ जाये तो गुरु पुनः शिष्य को परमात्मा से मिलाता है किन्तु यदि गुरु रूठ जाये तो परमात्मा तक जाने के मार्ग ही अवरूद्ध हो जाते हैं और मनुष्य को कहीं ठौर नहीं मिलती।

❑ **डॉ. ओम प्रकाश पारीक**

अखिल विश्व में सभी प्राणी माया के वशीभूत आचरण करते हुये स्व-स्व कार्यों में प्रवृत्त रहते हैं। इन प्राणियों में मनुष्य ही ऐसा प्राणी है जिसे बुद्धिप्राप्त है अतः वह अपने श्रेय एवं प्रेय मार्ग का निर्णय करने में सक्षम है। किन्तु जब मनुष्य अपनी मूल प्रवृत्तियाँ आहार, निद्रा, भय, एवं मैथुन में ही लगा रहना है तो वह अन्य प्राणियों के भाँति पशु तुल्य ही है। काल का प्रवाह निरन्तर गतिशील है। अतः मूल प्रवृत्तियों में फँसे मनुष्य को जब-तक आत्मबोध नहीं होता तो वह जन्म-मृत्यु के चक्कर में पड़ा रहता है और सुख-दुःख प्राप्त करता है। मनुष्य के परम कल्याण के लिये जो आत्मा व बोध कराने में सक्षम गुरु ही है। गुरु-गीता में इसको स्पष्ट करते हुये कहा गया है 'गु' शब्द अन्धकार का वाचक है तथा 'रु' शब्द उसका निरोधक है इसलिये माया जनित अज्ञान - अन्धकार को दूर करके आत्म साक्षात्कार करने वाला गुरु कहलाता है।

गु शब्दस्त्वन्धकारे स्याद् रु शब्दस्तन्निरोधके।
अन्धकार निरोधित्वाद् गुरुरित्यभिधीयते।।
(गुरुगीता 1/9)

मनुष्य सत्व-रज-तम गुणों वाली त्रिगुणमयी प्रकृति में कौन से गुण में अधिक व्यवहार करता है यह उसके स्वभाव एवं संगति पर निर्भर करता है। जहाँ साधु-संगति से उसका आचरण सात्विक होता जाता है वही दुर्जन संगति से उसमें रजो गुण और तमोगुण के प्रभाव से बहुत से दोष पैदा हो जाते हैं जो कि उसके जीवन को नारकीय बना देते हैं। रजोगुण और तमोगुण के प्रभाव से उसमें काम, क्रोध,लोभ, मद, मोह, ईर्ष्या जैसे भयंकर दोष उत्पन्न होते हैं। इन्हें मनुष्य के षड्रिपु अर्थात् छः शत्रु भी कहते है। भगवान श्री कृष्ण ने भी गीता में रजोगुण से उत्पन्न काम और क्रोध को सभी को नष्ट करने वाला महान पापी और शत्रु के तुल्य माना है।

काम एष क्रोध एष रजोगुणसमुद्भवः
महाशनो महापाप्मा विद्धयेनमिह वैरिणम् ।।
(गीता)

सांसारिक, अत्यन्त महान शत्रु, एवं अज्ञान रूपी कीचड़ में रहने वाले इन षड्रिपुओं से मनुष्य को मुक्ति दिलाने वाले गुरु ही होते हैं। वे ही संसार सागर से तारणहार हैं। कबीर दास जी ने बहुत ही सुन्दर ढंग से इस भाव को व्यक्त किया है-

कुमति कीच चेला भरा, गुरु ज्ञान जल होय।
जनम-जनम का मोरचा, पल में डारे धोय।।

अर्थात् शिष्य अज्ञान रूपी कीचड़ तथा कुबुद्धि से भरा होता है लेकिन जनम -जनम के इन मैलों को गुरु ज्ञान का जल पल में ही धो डालता है।

गुरु के सान्निध्य में शिष्य का सभी प्रकार से परिष्कार होता है उसे इस संसार यात्रा में अल्प से अल्प कष्ट उठाकर मृत्यु के बाद परमात्मा से जोड़ने की कला गुरु ही सिखाता है, अत: प्राचीन काल में गुरु का शिष्य पर सम्पूर्ण अधिकार होता था। शिष्य को डाँट-फटकार कर, दण्डित कर किसी भी रूप में उसके जीवन का उद्धार करना गुरु के जीवन का लक्ष्य होता था।

शिष्य को तपाकर उसे खरा सोना बनाया जाता था शारीरिक रूप से कितना भी कष्ट हो किन्तु अन्त: करण एवं आत्मिक रूप से गुरु अपने शिष्य को परिपक्व कर उसे बौद्धिक रूप से उन्नत एवं आत्मविश्वासी बनाता था, जैसे कुम्हार मिट्टी से बनाये घड़े को बहुत ही जतन से उसके अन्दर हाथ का सहारा देते हुये बाहर से चोट पहुँचाता हुआ एक सुन्दर आकार देता है उसी प्रकार गुरु कुम्हार की तरह अपने शिष्य को गढ़ता है तथा वह बाहर से तो चाहे उसे चोट पहुँचाता है अर्थात् उसको तपस्या करवाता था किन्तु उसके अन्त:करण को हमेशा सम्भालें रहता है और उसे आत्मप्रज्ञ बना देता है। कबीर दास जी ने इस बात को इस प्रकार से व्यक्त किया है-

गुरु कुम्हार सिस कुंभ है,गढ़ि-गढ़ि काढ़ै खोट।
अन्तर हाथ सहार दे, बाहर बाहै चोट।।

वस्तुत: मानव जीवन का उद्देश्य दैहिक, दैविक भौतिक एवं आध्यात्मिक रूप से उत्कर्ष प्राप्त करते हुये जन्म-मृत्यु के फेर से मुक्त होना है। यही मनुष्य का धर्म भी है।

''यतोऽभ्युदय नि:श्रेयस्सिद्धि: स धर्म:''

अर्थात् जिससे सभी प्रकार का अभ्युदय , उत्कृष्टता प्राप्त हो तथा अन्तत: मोक्ष मिले वह धर्म है। जीवन के इस उद्देश्य की प्राप्ति का मार्ग शिक्षा दिखाती है और वह गुरु के द्वारा ही प्राप्तव्य है। भारतीय दर्शन में इस संसार सागर में जीवन निर्वाह के लिये किये जाने वाले कार्यों को अविद्या तथा परमात्म साक्षात्कार करने के मार्ग को विद्या के नाम से कहा गया है। वस्तुत: संसार में जीवन निर्वाह के लिये आजीविका के योग्य बनना, अपने आपको सुरक्षित रूप से रखने की कला समझना तथा सामाजिक रूप से, सह अस्तित्व की भावना से जीवन-यापन करने का व्यवहार ये सब दर्शन में अविद्या के नाम से कहा गया है , अर्थात् यह सब नष्ट होने वाला है किन्तु एक निश्चित अवधि तक हमें इसमें रहकर जीवन -निर्वाह करना है अत: यह अविद्या आवश्यक भी है किन्तु इसमें उत्कृष्टता युक्त व्यवहार एवं सुसंगतता आनी चाहिये यह शिक्षा का कार्य है। इसी प्रकार बहुत सी योनियों के बाद मनुष्य जीवन मिला है जिसमें हमें जन्म-मृत्यु के लेशों से मुक्त होने का ज्ञान भी प्राप्त करना है जो कि वास्तव में यथार्थ है तथा शाश्वत है ऋषि - मुनियों ने उसी को प्राप्त करना मनुष्य जीवन का उद्देश्य बताया है और यही विद्या है। अविद्या और विद्या दोनों का उत्तम और कुशलता पूर्वक ज्ञान कराना सच्चे गुरु द्वारा ही संभव है। यही सांसारिक कला एवं अमरता का मार्ग है यजुर्वेद में इसको इस प्रकार व्यक्त किया गया है-

विद्यां चाविद्यां च यस्तद्वेदोभयं सह।
अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययाऽमृतमश्नुते।।
(यजुर्वेद 40/14)

इसलिये सद्गुरु की प्राप्ति के लिये सांसारिक सुख-दु:खों से व्याप्त व्यक्ति को अपने परमोच्च कल्याण मार्ग के लिये जिज्ञासु होकर गुरुदेव की शरण लेनी चाहिये वह गुरु ऐसा हो जो कि शब्द ब्रह्म में, वेदादि शास्त्र में निष्णात हो तथा नित्य निरन्तर परमब्रह्म में प्रतिष्ठित रहता हो एवं जिसका चित्त पूर्णत: शान्त हो चुका हो। ऐसा गुरु ही शिष्य को आत्मकल्याण करवाने में सक्षम है। श्रीमद्भागवत में इस बात को इस प्रकार व्यक्त किया गया है-

तस्माद् गुरुं प्रपद्येत जिज्ञासु: श्रेय उत्तमम्।
शाब्दे परे च निष्णातं ब्रह्मण्युपशमाश्रयम्।।
(श्रीमद्भागवत् 11/3/21)

ऐसा गुरु प्राप्त होने पर शिष्य के लिये सभी कुछ प्राप्य हो जाता है। दोनों की आत्मा में समभाव आता है। गुरु और शिष्य का सम्बन्ध अत्यधिक आत्मीय बनकर गुरु शिष्य को अपने में ही आत्मसात् कर लेता है और वह शिष्य में प्रतिबिम्बित होता है। अथर्ववेद में इस बात को व्यक्त किया गया है कि उपनयन के लिये आये हुये शिष्य को गुरु अपने गर्भ में तीन रात्रियों तक स्थापित करता है तथा उसे कलुषित संस्कारों से मुक्त करता हुआ विद्या ग्रहण के योग्य बनाता है इससे ज्ञात होता है कि गुरु और शिष्य का सम्बन्ध कैसा होना चाहिये-

आचार्य उपनयमानो
ब्रह्मचारिणं कृणुते गर्भमन्त:।
तं रात्रिस्तिस्र उदरे बिभर्ति तं
जातं दुष्टुमभिसंयन्ति देव:।
(अथर्व वेद)

आत्मीय और तारणहार गुरु शिष्य के सभी संशयों को दूर कर उसके अन्त: करण को प्रकाशित कर देता है। इसमें गुरु एवं शिष्य दोनों की ही पात्रता वाञ्छनीय है। जहाँ गुरु ब्रह्मनिष्ठ एवं पराविद्या के ज्ञानी होते है वही शिष्य जितेन्द्रिय, श्रद्धायुक्त और जिज्ञासु होता है ऐसे पात्र सत् शिष्य को अविद्या के पास से मुक्त करना ही गुरु का परम कर्त्तव्य है जिसमें की वह अक्षरतत्व को जान सके।

तद्विज्ञानार्थं स गुरुमेवाभिगच्छेत् समित्पाणि: श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठम्।
तस्मै स विद्वानुपसन्नाय सम्यक् प्रशान्तचित्ताय शमन्विताय येनाक्षरं पुरुषं वेद सत्यं प्रोवाच तां तत्त्वतो ब्रह्मविद्याम्
(मुण्डकोपनिषद् 1/2/12-13)

वस्तुत: मानव जीवन के उद्देश्य जो पुरातन काल में थे और शास्त्रोक्त थे वही उद्देश्य आज भी हैं वही त्रिगुणमयी मानवीय प्रकृति हैं तथा आहार , निद्रा, भय, मैथुन मूल प्रवृत्तियाँ भी वही हैं और मनुष्य के जीवन के उद्देश्यों को पूर्ति करने वाली शिक्षा का उद्देश्य ''सा विद्या या विमुक्तये'' (जो हमारी सांसारिक उलझनों को, बंधनों को दूर करते हुये अन्तत: मोक्ष प्राप्त करवायें वही शिक्षा है) भी वही है। इतना सब होते हुये भी आज का शैक्षिक पर्यावरण प्राचीन काल की तुलना में बदल गया है। युग बदला है किन्तु मनुष्य जीवन के शाश्वत तत्व वही हैं भौतिक आवश्यकतायें बदली हैं किन्तु मनुष्य की मनोवैज्ञानिक संतुष्टि एवं आध्यात्मिक ज्ञान पिपासा से आत्मिक कल्याण की प्राप्ति पूर्ववत् वही है। उत्तम सुख व आत्मिक शान्ति के लिये भौतिकता का मनुष्य जीवन में कितना स्थान और प्रभाव होना चाहिये तथा पर-दु:ख समभाव और आध्यात्मिकता का कितना स्थान होना चाहिये वह भी अपरिवर्तनीय है। भौतिक और आध्यात्मिक सुसंगति और विसंगति से सुख और दु:ख के आनुपातिक सम्बन्ध भी वही हैं। यह सब शाश्वत है किन्तु शिक्षक और शिष्य प्राचीन गुरु और शिष्य के भाव से दूर चले गये हैं और उसका मूल कारण वर्तमान में बढ़ता हुआ भौतिक परिवेश है। शिक्षक स्वयं एक वेतन भोगी कर्मचारी है एवं शिष्य केवल आजीविका के लिये शिक्षा ग्रहण करता है यही नहीं पात्र शिष्य धन के अभाव से पात्र होने पर भी शिक्षा प्राप्त नहीं कर पाता। मात्र धन कमाने की ही प्रतिस्पर्द्धा के कारण शिक्षा में भी अंक प्राप्त करने की अन्धी दौड़ में सम्मिलित होकर वाञ्छित अंक न मिलने पर शिक्षार्थी अवसाद ग्रस्त स्थिति में चला जाता है। यह सम्पूर्ण पर्यावरण मानव कल्याण से अत्यन्त दूर है।

अत: वर्तमान युग में भी जीवन के वास्तविक उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक शिक्षा ही सार्थक है और एतदर्थ वर्तमान परिस्थितियों की समीक्षा करते हुये यथोचित रूप में प्राचीन गुरु-शिष्य भाव स्थापित करने की आवश्यकता है। आज का शिक्षक जब अपने जीवन का उद्देश्य शिष्य का सर्वाङ्गीण विकास मानें तभी वह गुरु बन पायेगा एवं गुरु के उच्च आदर्शों से युक्त महत्त्व को अंगीकार करने पर ही उसे आत्मिक संतुष्टि का अनुभव होगा क्योंकि गुरु कोई सामान्य व्यक्ति नहीं है अपितु वह परमात्मा से भी बढ़कर है वह ही इस संसार सागर से तारणहार है तथा प्रत्यक्ष है अत: कबीरदास जी ने कहा है कि वे लोग मूर्ख हैं जो गुरु में सामान्य मनुष्य की बुद्धि रखते हैं क्योंकि परमात्मा भी रूठ जाये तो गुरु पुन: शिष्य को परमात्मा से मिलाता है किन्तु यदि गुरु रूठ जाये तो परमात्मा तक जाने के मार्ग ही अवरूद्ध हो जाते हैं और मनुष्य को कहीं ठौर नहीं मिलती।

कबिरा ते नर अन्ध है, गुरु को कहते और।
हरि रूठे गुरु ठौर है, गुरु रूठे नहीं ठौर।।

इस प्रकार आज के शैक्षिक पर्यावरण में तारणहार गुरु की अवधारणा को पुन: स्थापित करने की आवश्यकता है। ❑

(व्याख्याता संस्कृत, बाबा नारायणदास महाविद्यालय, चिमनपुरा, जयपुर)

गुरु का आश्रय - जीवन का आधार

❑ डॉ. रेखा भट्ट

भारतीय गुरु शिष्य परम्परा में गुरु द्वारा ज्ञान पाने की मूल पात्रता शिष्य का गुरु के प्रति समर्पण, सेवा व आज्ञाकारिता ही थी। सम्पूर्ण आर्यावर्त में आश्रम व्यवस्था के अनुशासन का पालन अधिसंख्य समाज करता था। इसमें उपनयन संस्कार के साथ ही बालक के प्रथम पच्चीस वर्ष शिष्य द्वारा गुरु के कठोर अनुशासन में व्यतीत होते थे। गुरु शिष्य को इस प्रकार संस्कारित करते थे कि वे अपने परिवार व समाज के प्रति उत्तरदायी बनें। यह समय ही व्यक्ति के पचास वर्ष की आयु तक गृहस्थाश्रम में जीवन व्यतीत करने का आधार बनता था। जीवन के अन्तिम वानप्रस्थ व संन्यासाश्रम में आध्यात्मिक विकास की आधार भूमि भी गुरुकुल में ही तैयार हो जाती थी। क्योंकि गुरु द्वारा जीवनोपयोगी विधाओं को सिखाने के साथ ही वेद, वेदांग, उपनिषद् भी शिक्षण व चिन्तन के विषय हुआ करते थे।

भारतीय गुरु शिष्य परम्परा में गुरु द्वारा ज्ञान पाने की मूल पात्रता शिष्य का गुरु के प्रति समर्पण, सेवा व आज्ञाकारिता ही थी। सम्पूर्ण आर्यावर्त में आश्रम व्यवस्था के अनुशासन का पालन अधिसंख्य समाज करता था। इसमें उपनयन संस्कार के साथ ही बालक के प्रथम पच्चीस वर्ष शिष्य द्वारा गुरु के कठोर अनुशासन में व्यतीत होते थे। गुरु शिष्य को इस प्रकार संस्कारित करते थे कि वे अपने परिवार व समाज के प्रति उत्तरदायी बनें। यह समय ही व्यक्ति के पचास वर्ष की आयु तक गृहस्थाश्रम में जीवन व्यतीत करने का आधार बनता था। जीवन के अन्तिम वानप्रस्थ व संन्यासाश्रम में आध्यात्मिक विकास की आधार भूमि भी गुरुकुल में ही तैयार हो जाती थी। क्योंकि गुरु द्वारा जीवनोपयोगी विधाओं को सिखाने के साथ ही वेद, वेदांग, उपनिषद् भी शिक्षण व चिन्तन के विषय हुआ करते थे।

गुरु अपने शिष्य के सम्पूर्ण जीवन को उत्कृष्ट बनाने के लिये नित्य, निरन्तर प्रयास करते थे। गुरु द्वारा किया गया क्रोध भी शिष्य के जीवन में उपलब्धि प्राप्त करने का अवसर था, क्योंकि क्रोध प्रकट करते हुए भी गुरु द्रवित हृदय से शिष्य को संरक्षण प्रदान करते थे तथा शिष्य के जीवन को स्वयं से भी ऊपर उठाने की भावना निहित रहती थी। नि:स्वार्थ भाव से गुरु सभी प्रकार का ज्ञान अपने शिष्य को प्रदान करते थे। चारों पुरुषार्थ धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष द्वारा श्रेष्ठ नागरिक का निर्माण करते थे जो अपने ज्ञान का उपयोग करते हुए समाज व राष्ट्र की उन्नति में अपना योगदान दे सकें।

जिस प्रकार एक दीपक से दूसरे दीपक को प्रकाशित कर असंख्य दीप जगमगा उठते हैं वैसे ही भारत में जीवन को ज्ञान द्वारा प्रकाशमान करने की प्राचीन गुरु शिष्य परम्परा रही है। गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने भी गुरु शिष्य परम्परा को ''परम्पराप्राप्त योग'' बताया है। यह योग गुरु द्वारा प्रदान किये गये लौकिक व सांसारिक ज्ञान से आरम्भ होता है तथा अन्तिम सत्य पारलौकिक ज्ञान (ईश्वर) की प्राप्ति है।

भारतीय संस्कृति में गुरु को निर्गुण एवं निराकार भी माना गया है। गुरु को किसी निश्चित गुण आकार या प्रकार में नहीं बाँधा जा सकता है। जो मानव मात्र को किसी भी प्रकार का ज्ञान प्रदान करते हैं, वे सभी गुरु हैं। इस तथ्य की पुष्टि निम्न प्राचीन श्लोक से स्पष्ट है-

''शरीरमिन्द्रियं प्राणचार्थः स्वजन बन्धुता।
मातृकुलं पितृकुलं गुरुरेव न सशंयाः।।''

अर्थात्-शरीर, इन्द्रियाँ, प्राण, धन, स्वजन, मातृकुल एवं पितृकुल सभी गुरु ही है, इसमें कोई संशय नहीं।

भगवान दत्तात्रेय ने तो अपने जीवन में जीवों (कुत्ता, चींटी, हाथी) को भी गुरु माना था।

आचार्य चाणक्य ने कहा है-

एकाक्षरं प्रदातारम् यो गुरुं नाभिवंदति।
श्वानयोनिशत् मुक्तः चाण्डालेष्वभिजायते।।

अर्थात् - एक अक्षर का ज्ञान देने वाला भी गुरु कहलाता है। यदि कोई ऐसे गुरु का आदर नहीं करता तो वह श्वान योनि में सौ बार जन्म लेने के बाद भी चाण्डाल के रूप में जन्म लेता है।

इन उद्धरणों से स्पष्ट है कि प्राचीन भारतीय संस्कृति में गुरु पद कितना महत्त्वपूर्ण और उच्च स्तरीय रहा है। शास्त्रों में वर्णन मिलता है कि सम्पूर्ण जगत को मार्ग दिखाने वाले तथा विष्णु स्वरूप जगत का पालन करने वाले गुरु का अनादर भगवान शिव को भी सहन नहीं होता है।

महाकवि तुलसीदास ने रामचरित मानस में एक दृष्टान्त उद्धृत किया है, जिसके अनुसार-ब्राह्मण रूप धर कर कागभुशुण्डि ने अभिमानपूर्वक अपने शिवभक्त गुरु का अपमान किया। इस पर क्रुद्ध होकर महादेव शिव ने ब्राह्मण को करोड़ों युगों तक जन्म न ले सकने के पश्चात् तिर्यक (पशु-पक्षी) योनियों में शरीर धारण करते रहने का श्राप देकर दण्डित किया। कम्पित शिष्य को देखकर एवं भयानक शाप सुनकर गुरु को अतीव सन्ताप हुआ-

हाहाकार किन्ह गुरुदारून सुनि सिवसाय।
कम्पित मोहि बिलोकि अति उर उपजा परिताप।।

दोहा 108(क.)।।

गुरु ने अज्ञानी शिष्य पर क्रोध न करने के लिए भगवान शिव से प्रार्थना की-

तनव माया बस जीव जड़ संतत फिरइ भुलान।
तेहि पर क्रोध न करिअ प्रभु कृपा सिंधु भगवान।।

दोहा 108 (ज)।।

तथा शिष्य कागभुशुण्डि को अल्प समय में शाप के प्रभाव से मुक्त कर अनुग्रह प्रदान करवाया।

गुरु की क्षमाशीलता व दयालुता के कारण वे अपने शिष्य को ईश्वर के प्रकोप से भी मुक्ति दिलवाते हैं, किन्तु स्वयं गुरु के क्रोध द्वारा शिष्य का विनाश होने से कोई नहीं रोक सकता।

शिव रुष्टे गुरुस्थाता गुरौ रुष्टे न कश्चन।
लब्ध्वा कुल गुरुं, सम्यगुरुमेव समाश्रयेत्।।

श्लोक का अभिप्राय है कि- यदि साक्षात शिवजी रुष्ट हो तो गुरु बचाने वाले हैं किन्तु यदि गुरु रुष्ट हो तो बचाने वाला कोई नहीं। अत: गुरु को संप्राप्त कर सदा उनके आश्रय में रहना चाहिये।

महाभारत में इसका वर्णन मिलता है कि, जब वीर सूर्यपुत्र कर्ण ने स्वयं को ब्राह्मण पुत्र बताकर गुरु परशुराम से धनुर्विद्या प्राप्त की। वास्तविकता सामने आने पर कर्ण के असत्य से क्रोधित होकर गुरु परशुराम ने ब्रह्मास्त्र व अन्य सभी विद्या विस्मृत हो जाने का शाप देकर कर्ण को दण्डित किया।

महाभारत के युद्ध में कौरवों की ओर से लड़ते हुए अपनी रक्षा में ब्रह्मास्त्रों की आवश्यकता पड़ने पर गुरु परशुराम द्वारा सीखी गई धुनर्विद्या व अन्य शक्तियों का प्रयोग कर्ण नहीं कर पाते हैं। गुरु का शाप युद्ध में सूर्यपुत्र कर्ण की मृत्यु का कारण बना।

सभी शास्त्रों में वर्णन है कि गुरु जगत का संहार करने की भी शक्ति रखते हैं, अत: गुरु को महेश भी कहा है। गुरु का आश्रय एवं कृपा, शिष्य की श्रद्धा व भक्ति पर निर्भर करती है। गुरु कृपा से शिष्य के जीवन से सारे लोभ, मोह व अज्ञान के अंधकार दूर होते हैं।

इस प्रकार हजारों वर्षों से उच्च स्तरीय गुरु शिष्य परम्परा के कारण ही भारत ज्ञान विज्ञान का विश्व केन्द्र बना रहा। सम्पूर्ण विश्व की मानवता को गुरु ज्ञान देने का कार्य भारतीय संस्कृति ने ही किया है। इसी कारण यहाँ के समाज में विपरीत परिस्थितियों में भी गुरुओं के कारण ही ज्ञान की अविरल गंगा निरन्तर प्रवाहमान रही है।

अयोध्यापति मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम के साथ गुरु विश्वामित्र एवं गुरु वशिष्ठ, द्वारिकाधीश, महाभारत के महानायक योगीराज श्री कृष्ण के साथ गुरु सन्दीपनी, धनुर्धर अर्जुन के साथ आचार्य द्रोण और चन्द्रगुप्त मौर्य के साथ आचार्य चाणक्य का नाम अवश्य उल्लेखित होता है।

भारतीय परम्परा में सिख पंथ के संस्थापक गुरुनानक देव से प्रारम्भ होकर अन्तिम दशमेश गुरु गोविन्द सिंह जी का एक विशिष्ट और महत्त्वपूर्ण स्थान है। भक्तिमति मीरा ने सन्त रैदास को गुरु मानकर इस परम्परा को वर्ण मुक्त ही नहीं किया वरन् नवीन ऊँचाइयाँ भी प्रदान की। सन्त कबीर तो गुरु को गोविन्द से भी बढ़कर मानते हैं। आज भी भारतीय समाज में उनका प्रसिद्ध दोहा ''गुरु गोविन्द दोहूँ खड़े, काके लागू पाँय'' प्रचलित है।

परन्तु कालचक्र की गति से आज यह उच्च स्तरीय गुरु ज्ञान व गुरु पद लगभग अपनी महत्ता खो चुका है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत में अपनी प्राचीन शिक्षा व्यवस्था के स्थान पर यूरोपियन मैकॉलयी शिक्षा व्यवस्था को अपना लिया। इसी से सम्पूर्ण शिक्षण प्रक्रिया के उद्देश्य भी ज्ञान आधारित नहीं रहे।

आधुनिक समय में विद्यार्थी पाश्चात्यता का अनुकरण करते हुए विद्यार्जन के लिए भौतिक साधनों पर निर्भर हैं तथा भौतिकता ही साध्य है। ज्ञानप्रद विद्या प्राप्त कर जीवन के अभ्युदय का लक्ष्य नहीं रहा है, वरन् अधिक से अधिक अर्थ लाभ की दृष्टि से ही विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त करता है। पाश्चात्य देशों की तरह भारत में भी विद्यार्थियों को शिक्षक द्वारा दण्डित किया जाना अपराध माना जाता है, अत: विद्यार्थी शिक्षक के कठोर वचन एवं व्यवहार से सुरक्षित रहते हैं किन्तु इस प्रकार के दण्ड अधिनियम से शिक्षक द्वारा विद्यार्थियों को सुधारने व जीवन को उन्नत करने की प्रक्रिया समाप्त हो गई है। वर्तमान व्यवस्था में पाठ्यक्रम पूर्ण करवाने और परीक्षाएँ सम्पन्न करवाने तक ही शिक्षक का दायित्व है।

विद्यार्थी के सामाजिक प्रतिष्ठा प्राप्त करने व अपने सभी कार्यों व मनोरथों को सिद्ध करने में शिक्षक का महत्त्वपूर्ण स्थान है। आधुनिक स्पर्द्धा और संघर्ष के इस युग में शिक्षक ही विद्यार्थी को सदाचार व सद्गुणों (सद्गुणों) से उत्प्रेरित करता है। शिक्षक के बताये मार्ग का अनुसरण करने पर विद्यार्थी अपनी योग्यता को पहचानता है तथा समृद्धशाली भविष्य का निर्माण करने में सक्षम होता है।

तुलसीदास जी ने कहा है-

गुरु बिनु भवनिधि तरइ न कोई।
जो बिरंचि संकर सम होई।।

गुरु बिना कोई भी भवसागर पार नहीं कर सकता, चाहे वह शिव शंकर ही क्यों न हो। वर्तमान शिक्षण में गुरु के महत्त्व को पुन: स्थापित करने की आवश्यकता है। परिवर्तनशील समय और भारतीय समाज को ज्ञान आधारित दिशा बोध देने की थोड़ी बहुत ताकत आज भी यदि शेष है तो वह गुरु अर्थात् वर्तमान शिक्षकों में ही है। विद्यार्थी की प्रारम्भिक शिक्षा के साथ ही अधिभौतिक व अधिदैविक धरातल का निर्माण करने व जीवन दर्शन पर केन्द्रित शिक्षा प्रदान करने से जीवन में शिक्षक का महत्त्व बढ़ेगा और भारतीय गुरु शिष्य परम्परा पुन: समृद्ध हो सकेगी।❑

(व्याख्याता-रसायन शास्त्र, राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर)

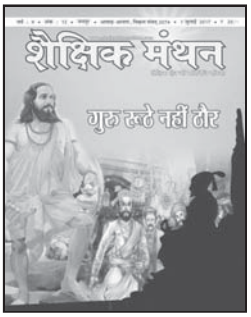

सद्गुरु ऐसी शक्ति है जो शिष्य के सभी प्रकार के शाप, ताप से रक्षा करती है। शरणागत शिष्य के दैविक, दैहिक एवं भौतिक कष्टों को दूर करने का दायित्व गुरु का है। गुरु-शिष्य परंपरा भारतीय संस्कृति का अहम और पवित्र हिस्सा है। जीवन में माता-पिता का स्थान कभी कोई नहीं ले सकता क्योंकि वे ही हमें खूबसूरत रंगीन दुनिया में ले आते हैं और गुरुजी हमें जीवन जीने का असली सलीका सिखाते हैं और सत्यपथ पर चलने को प्रेरित और प्रोत्साहित करते हैं। भारतवर्ष में गुरु की भूमिका समाजसुधारणा से लेकर क्रांतिकारी दिशा दिखाने वाली रही है। प्रवर्तमान युग में सारे विश्व में गुरु महिमा बेजोड़ और अनन्य मानी जा रही है।

गुरु की महिमा न्यारी

❑ प्रदीप एस. कुवाडिया

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुः गुरुर्देवो महेश्वरः।
गुरुः साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्री गुरवे नमः।।

भारतीय संस्कृति में गुरु का महत्त्व काफी ऊँचा है। गुरु की कृपा के बिना भगवान की प्राप्ति असम्भव है। सबसे बड़ा तीर्थ गुरुदेव ही है, जिनकी कृपा के लिये भक्त एवम् शिष्य अपना तन, मन, धन गुरुजी के सेवाकार्य में लगा देते हैं। भले ही कोई ब्रह्मा, विष्णु, शंकर भगवान के समान हो, वह भी गुरु के पथ पदर्शन के बिन भवसागर पार नहीं कर सकता। धरती के आरम्भ से ही गुरुजी की अनिवार्यता पर प्रकाश डाला गया है। वेदों, उपनिषदों, पुराणों, गीता, गुरुग्रंथ साहिब आदि सभी धार्मिक ग्रंथों एवम सभी महान संतों द्वारा गुरु की महिमा का गुणगान किया है।

तीरथ गये तो एक फल, संत मिले फल चार,
सदगुरु मिले तो अनंत फल कहै कबीर विचार।

किसी भी गुरुजी की प्राप्ति के लिये प्रथम आवश्यकता समर्पण की होती है। समर्पण भाव से ही गुरु का प्रसाद शिष्य को मिलता है इसी सन्दर्भ में यह उल्लेख किया गया है कि

यह तन विष की बेलरी, और गुरु अमृत की खान,
शीश दिया जो गुरु मिले तो भी सस्ता जान।

गुरु की महत्ता, गुरु का ज्ञान गुरु से भी अधिक महत्त्वपूर्ण है जिस दिन शिष्य ने गुरु का मानना शुरू किय उससे हरेक भक्त या शिष्य का अर्जुन, कृष्ण, प्रहलाद, राम, सुदामा, की तरह सफलतामय जीवन विकास शुरू हो गया यह समझ लेना चाहिये।

''गु'' का अर्थ होता है अंधकार , ''रु'' का अर्थ होता है प्रकाश। गुरुजी हमे अंधकार यानि अज्ञान से ज्ञानरूपी प्रकाश की ओर ले जाते है आज के ज्ञान विज्ञान के युग में गुरु का होना बहुत जरुरी है। हमारी भारतीय गुरुपरंपरा में युगों से वेदों से ले के वर्तमान युग में भारतीय गुरुओं ने सारी दुनिया को कुछ न कुछ प्रदान किया है, सिखाया है। गुरु दत्तात्रेय से ले के बाबा रामदेव तक सभी गुरुजनों ने वैश्विक लोकजीवन पर अपना प्रभाव छोड़ा है। भारतीय गुरुजनों ने शून्य, शांति, सौम्यता का सन्देश सारे विश्व के समक्ष प्रशस्य रूप में दिया है।

गुरु दत्तात्रेय – गुरु दत्तात्रेय ने पशु, पक्षियों को मिला के 24 गुरु बनाये थे। जो हमें आज भी यह संदेश पहुंचाने में सफल हुये हैं कि चाहे मनुष्य हो या पशुपक्षी जो भी हमें ज्ञान दे, जो भी हमारी कठोरता दूर करे हमें मृदु बनाये उसे गुरु बनाने से हिचकिचाना नहीं चाहिये। आज के युग में जब अभ्यारण्य जैसे सुरक्षित क्षेत्र बनाये जाते हैं गुरु दत्तात्रेय ने तब पशुपक्षियों पर आदर भाव व्यक्त

किया था।

गुरु महर्षि भृगु – ब्रह्मा के मानसपुत्र महर्षि भृगु ने आयुर्वेद की संबंधी प्राकृतिक चिकित्सा का महत्त्व समझाया है भृगु ने सूर्य की किरणों द्वारा रोगों के उपशमन की चर्चा की है। गुरु भृगु की पारसी लोग आज भी पूजा करते हैं। आज के जमाने में लोग एलोपैथी दवाइयाँ से तंग आ चुके हैं उन्होंने उस जमाने में आयुर्वेद के महत्त्व को लोगों को समझाया था।

गुरु शंकराचार्य – शंकराचार्य ने हिंदू धर्म को सामर्थ्यवान बनाने का भरपूर प्रयास किया। उन्होंने हिंदू समाज की सभी जातियों को इकट्ठा करके ''दसनामी'' संप्रदाय बनाया और साधु समाज की चली आ रही धारा को पुनर्जीवित कर चारधाम के चार पीठ का गठन किया। जिस पर चार शंकराचार्यों की परंपरा की शुरुआत की। शंकराचार्य ने अनेक श्रमन, बौद्धों को शास्त्रार्थ में पराजित किया उन्होंने ग्यारह उपनिषद एवम गीता पर भाष्यों की रचनायें की। राष्ट्रवादी विचारधारा से प्रभावित भारत का ग्रामीण वर्ग दूरवर्ती क्षेत्र में काम करने वाला सेवाभावी संगठन राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ इस युग में एकता का महत्व समझते आर्यावर्त की तमाम हिंदू जातियों को गठित करने एवम सामर्थ्यवान बनाने का प्रयास निष्ठापूर्वक कर रहा है।

गुरु संदीपनी – संदीपनी आश्रम की प्रसिद्धि का विशिष्ट कारण भगवान श्री कृष्ण का विद्या अर्जित करना। पौराणिक मान्यता अनुसार कृष्ण, बलराम, सुदामा ने इसी आश्रम से कुलगुरु संदीपनी से शास्त्रों और वेदों ज्ञान लिया। इसी आश्रम की भारतीय गुरु परंपरा ने भगवान कृष्ण जैसा महान लोकरक्षक, क्रांतिकारी, किसान हितैषी, गौरक्षक भारतवर्ष को दिया।

गुरु वशिष्ठ – गुरु वशिष्ठ रघुकुल के गुरु थे। भगवान राम उनके प्रिय शिष्य थे। भगवान राम ने भारतवर्ष की मर्यादायें, शिष्टाचार, त्याग, समर्पण के गुण गुरु वशिष्ठ से सीखें।

धर्म से रहो अधर्म से नहीं,
सत्य बोलो असत्य नहीं,

ऋग्वेद के सातवें मंडल के दृष्टा वशिष्ठ है। उसी ने हिंदू धर्म को यश प्राप्त करवाया। सप्तर्षि में स्थान प्राप्त करने वाले इस आदर्श ब्रह्मर्षि की ऋणी रहेगी भारतीय संस्कृति।

गुरु द्रोणाचार्य – भरद्वाज के पुत्र एवं धनुर्विद्या में निपुण परशुराम के शिष्य थे गुरु द्रोण। गुरु द्रोण ने भारतवर्ष को अर्जुन जैसा स्थितप्रज्ञ और बलवान योद्धा प्रदान किया गुरु द्रोण और कृष्ण जैसे प्रभावी गुरुओं की वजह से अर्जुन ने धर्मयुद्ध में अपनी योग्यता साबित की।

गुरु संत कबीर – संत कबीर का जन्म हिंदू परिवार में और पालन पोषण मुस्लिम परिवार में हुआ था। गुरु रामानंदजी उनके गुरु थे कबीरजी अधिक शिक्षित न होने के बावजूद अपने युग के बड़े समाज सुधारक बने। वे निर्गुण ब्रह्म उपासक थे और जाति व्यवस्था के घोर विरोधी थे। कबीरजी ने भारतीय समाज को दकियानूसी एवं तंगदिली से बाहर निकालकर एक नयी राह पर डालने का प्रयास किया। भारतीयों की रूढिवादिता एवं आडंबर पर करारी चोट करने वाले कबीरजी की वाणी आज भी घर-घर में गूंजती है। संत कबीर की साखी में से मिलने वाले सुधारत्मक संदेश ने भारतीय जीवनधारा को नया रूप दिया। उनका सुख्यात संदेश है जिनमें गुरु महिमा वर्णित है।

कबीरा ते नर अंध है, गुरु को कहते और।
हरी रूठे गुरु ठौर है, गुरु रूठे नहीं ठौर।।

डॉ. राधाकृष्णन् – महान् शिक्षाविद् विचारक एवं भारतीय संस्कृति के ज्ञानी विलक्षण प्रतिभा डा. राधाकृष्णन ने भारतीय शिक्षा को भारतवर्ष उपरांत विदेशों में भी विलक्षण तरीके से प्रस्थापित किया। अपने व्याख्यान, लेख और अपने भाषण के द्वारा भारतीय दर्शन शास्त्र को सारी दुनिया के समक्ष रखा। पाँच सितंबर को हर साल शिक्षक दिवस के रूप में मनाया जाता है।

बाबा रामदेव – आज विश्व तनाव, मेदस्विता से परेशान है। बाबा रामदेव ने आयुर्वेद, योग, भारतीय नैसर्गिक शक्ति से विश्व को राहत प्रदान की है। इक्कीस जून विश्वयोग दिन के रूप में मनाया जा रहा है। माननीय नरेन्द्र मोदीजी ने भी इस विषय में काफी प्रयास किया है।

निष्कर्ष :-

कबीरा ते नर अंध है, गुरु को कहते और।
हरि रूठे गुरु ठौर है, गुरु रूठे नहीं ठौर।।

(अर्थात् भगवान रूठ जाये तो गुरु शिष्य को बचा लेते है, लेकिन अगर गुरु ही रूठ जाये तो फिर शिष्य के और रास्ते कठिन हो जाते है।)

सद्गुरु ऐसी शक्ति है जो शिष्य के सभी प्रकार के शाप, ताप से रक्षा करती है। शरणागत शिष्य के दैविक, दैहिक एवं भौतिक कष्टों को दूर करने का दायित्व गुरु का है। गुरु-शिष्य परंपरा भारतीय संस्कृति का अहम और पवित्र हिस्सा है। जीवन में माता-पिता का स्थान कभी कोई नहीं ले सकता क्योंकि वे ही हमें खूबसूरत रंगीन दुनिया में ले आते हैं और गुरुजी हमें जीवन जीने का असली सलीका सिखाते हैं और सत्यपथ पर चलने को प्रेरित और प्रोत्साहित करते हैं। भारतवर्ष में गुरु की भूमिका समाजसुधारणा से लेकर क्रांतिकारी दिशा दिखाने वाली रही है। प्रवर्तमान युग में सारे विश्व में गुरु महिमा बेजोड़ और अनन्य मानी जा रही है। आज भारत के कई युवा सारे विश्व में अपनी प्रतिभा का, योग्यता का हुनर दिखा रहे हैं। आज भारत के पास विश्व का सबसे ज्यादा युवाधन है। वो दिन दूर नहीं जब गुरुजी के मार्गदर्शन से भारतीय युवा अनेकाविध क्षेत्रों में सफलता का झंडा विश्व के समक्ष लहरायेंगे। श्रीकृष्ण, श्रीराम, अर्जुन, सुदामा, प्रहलाद आदि अनेकाधिक आदर्शित पात्रों को विश्वफलक पर चमकाने में गुरु का हाथ गौरवांवित है। आने वाले समय में भी आर्यावर्त में गुरुओं का विलक्षण ज्ञान, सही राह, ज्ञान-विज्ञान और स्नेह बरसता रहे.....

ज्ञान, चरित्र और संस्कार की हमने शिक्षा पायी है, गुरु की महिमा न्यारी है।

आरूणि की गुरुभक्ति से हमने शिक्षा पायी है, कबीर जैसे महान संत ने गुरु की महिमा गायी है।। ❑

(माध्यमिक शिक्षक)

Guru Ruthe Nahin Thaur

The object of teaching a child is to enable him to get along without his teacher. GOD is not all that exists. If we focus on these lines one may find it easier to get to the target. Faith has no disappointment. This single line is enough to follow and come out with flying colours. To adopt this one has to exhibit patience, perseverance and has to show being docile. If one does not follow the right path shown to him he cannot reach to desired goal. It is just like spitting in the sky where the spit is bound to come back on his face, thus ruining one's face or his appearance.

❑ **Prof. A. K. Gupta**

If your Guru is annoyed, you do not have any place in the universe. that's the meaning of the verse written above. Guru means anything or person having big impact on you in any manner or field. Guru comes next to your parents or even in some cases he or she may have bigger place in your heart because it is he who can guide to have a place in the society. So at every crucial point in you it is he only who can put you out of trouble. Even your parents or even GOD cannot find the way to put you out of trouble.

In the ancient times he was worshiped like anything because his disciples are known as per his fame. So in the ancient times, it was his endeavor to see that his pupil succeeds. He used to put all his qualities in his disciples. Although it might be displeasing to the pupil at times, but in the end it resulted in good and taken in letter and spirit. As opposed to present times, where will of parents prevails and education is taken as another commodity. The present time is of short cuts: Gaining everything in shortest possible time. Thus putting every relation in short cuts. May it be parents or even life partner, leave aside the Guru Shishya Parampara.

In the present competitive times it is more important to have good relations with your Guru. May it be class room teacher or your research guide. This becomes more important when the disciple is female because nowadays laws are in their favour. Therefore a person working as per rules is not preferred and all attempts are made to put him down in the eyes of the so called justifiable society. Short time gainers prefer to act in that manner. They may prefer to act and be guided in that manner only. Be the guiding force may come from family or friend again short time gainers. It is basically the GURU who has to play pivotal role, leveling the score may not be a problem for him. False allegations have their own short life, with the passage of time things may change making it troublesome for the complainant. Not disposing such matters may be considered cruelty to both the persons.

Guru as named for Jupiter, known for being Gurus of Devata where as Venus is considered as Guru of Rakshasas. They work as per their nature While Jupiter seldom does wrong things even if he may be at loss while with the Venus the same may not be true. Although their path may be different but both are assumed to lead to path of elevation. It is the time which matters because the subject has its importance. As we know the even Lord Krishna while speaking false statement " Mein nahin Makhan Khayo" turn at last to the truth statement of "Meine hi Makhan Khayo".

One cannot think of the repercussions of the event to both the families and related persons. Motivators in such cases may leave to support for wrong cause as the time passes. The

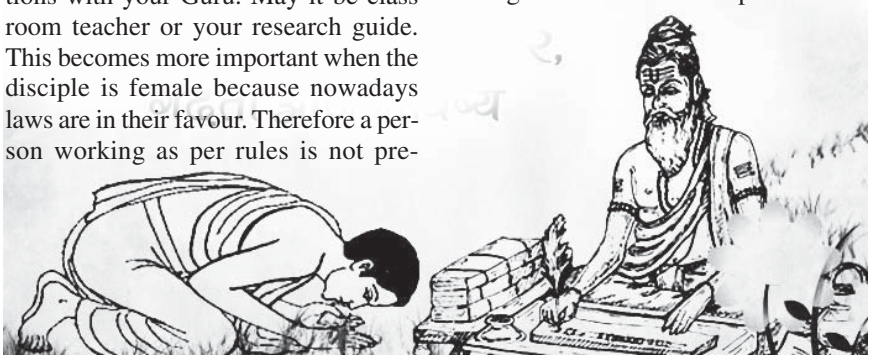

Complainant remains alone in the last. Because as their aim is fulfilled they try to detach themselves from the such ill fated event. While many may not be interested in disposing off such cases because it may suit them.

Main objective remains to eradicate it or to enhance it. Thus abstract form is preferred i.e. to put it the form of Jhanda or the flag to put as Guru may be suitable to many. Thus the role of emotions/ thoughts which remains suitable to many as the per the thoughts for the abstract form such as Country. If one cares for the Guru he/ she may observe some indications given by the Guru for his annoyance. The Guru may not become a hurdle in the progress of his disciple. But his not supporting the disciple's candidature in any manner cannot be termed good. One cannot think of Guru at receiving end by expressing his apologies for the fault which he has not committed. However he is expected to have patience to himself or his disciples.

With the time things may not go as we expect it to happen His close associates may turn their back towards the truth, while he may expect close associates to deliver right goods. Even they may be termed as having wrong stand in the time to come, but for short term gains they may adopt it. One may expect the right time to come by. It may so happen that this may be beginning of the wrong way, where one may find it easy to follow. justifying his all wrong deeds in the name of idealistic approach.

As we know the power corrupts the person may be in advance or later. If one looks back changes in the society e.g. advancement in technology and its impact on the society/ family etc. The impact may not be conducive on the family structure or the life style. One is expected to witness changes in the family may not always be willingly but one is forced to witness the changes. The time has come to see from joint family to core family concept which may not be good for our approach or such countries followings our concept i.e. Gross Happiness Index e.g. BHUTAN where the time found to remain standstill.

Role of Guru is thus very important because it he who shares with you the line in which you are in, it may not be your parents. Of course the parents have their own important role. Mother being the first Guru and Father being next to her can play an important role in the life. Well it is now clear that one cannot find any place in the world i.e. THAUR. Samskars are crept in your personalities unknowingly from persons around us. The famous saying goes that way "As you sow so you reap". This goes on everybody because you unknowing impart Samskars which you yourself may not desire to face.

The object of teaching a child is to enable him to get along without his teacher. GOD is not all that exists. If we focus on these lines one may find it easier to get to the target. Faith has no disappointment. This single line is enough to follow and come out with flying colours. To adopt this one has to exhibit patience, perseverance and has to show being docile. If one does not follow the right path shown to him he cannot reach to desired goal. It is just like spitting in the sky where the spit is bound to come back on his face, thus ruining one's face or his appearance.

Emotions have a way of upsetting logic, and we may not ignore them simply because they seem to be so unreasonable.

By annoying Guru you are losing a senior fellow ever ready to help you out from a worse condition. On the contrary you may fall in to clutches of the so called bad persons. The question one should ask himself that if the allegations are false you will not get. He same support as getting it today. It may so happen that as soon as their objective is fulfilled they may leave you however they may be considered close to you. It is very difficult to put back toothpaste back in the tube one can take out from. So how to come out of the situation without blaming anybody is the real game which shows your potential. There are many instances one can cite, of course the thread without any knot has its own delicate appearance. Well GOD is great giving you an opportunity to get a second father like figure, but it is up to you how to use it.

The old age sayings proves to be right even today e.g. "Guru Ruthe Nahin Thaur" For short term gains one may opt for wrongful act/deed, but in the end it may not prove to be a healthy sign. Think about the situation if it does not have happened the response one may get reduces to minimal for in the present day world Information Technology has so advanced that it hardly takes any time to react and fetch results. May it be promotions, publications, professional field achievements, selections or any other similar field. This has been proved to be right at many places or instances. ❑

(Professor, Structural Engineering, J. N. V. University, Jodhpur)

Shikshak has to assume the role of a Guru to do such things, no matter how small or limited his are of operation is. One student is sufficient, to light this lamp as just one student shall show light to many who are to follow.This is the least we can think of doing at the present situation, but this small thing shall go a long way. In one way this is good, good in the sense that here we are entirely autonomous. We need not depend on anything and anyone, we just have to fill in Bharat within us and go about teaching.

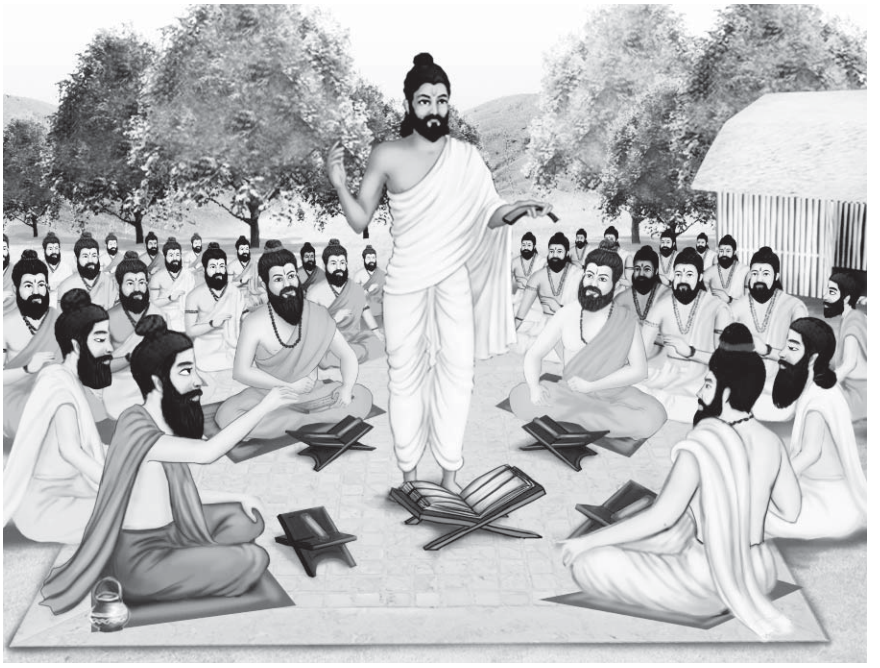

Bharatiya Guru Parampara

❑ **Dr. TS Girishkumar**

The concept of 'Guru' or Acharya has a very im portant place as well as function in Bharatiya Parampara. So much so, the guru practice had become a very common matter of practice among the Hindus all over. Most people do find a Guru, and many take 'Diksha' too, and do really go about practicing it without failing. Like in every case, the knowledge begins in the Vedas itself.

References to Guru Concept

Perhaps the very first reference to Guru concept is from Rg Veda itself. Naturally, the Vedic society used to be traditionally so made and continued. (Rg Veda, 4.5.6). Thereafter we have number of texts highlighting the Guru concept, and making explicit what Guru is all about. The Skanda Purana has a 'Guru Gita' in the Uttara Kanda of it. It is in the form of dialogue, or conversation between Bhagwan Shankar and Devi Uma. This conversation discusses at length about the Guru concept and should it be mentioned, it shall be longer. Taittariya Upanishad discusses Guru concept vide 6.2.3. Shankaracharya's Upadesasahasri, pages 3-4 also discusses Guru Concept. Mundakopanishad (3.2.9) says that Guru is 'Brahmavid Brahmaiva Bhavati'. But the most popular expression about Guru is from Shikshavalli (1.20) of Taittariya Upanishad that say 'Matru Devo Bhava, Pitru Devo Bhava, Acharya Devo Bhava and Atithi Devo Bhava'. After mother and father, it is the Guru who comes in importance.

Human life

Human being is human being only with his existential myriad predicaments among other humans, and man in isolation may hardly be termed human being, and his existence human exist-

ence. There are various factors those contributing to man making, normative and others as well through an unimaginably laborious long process through time. Over long period of existence, civilised societies had patterned some programme of training, spontaneous and involuntary to this end.

Man is a mind body combination.On a theoretical level, both mind and body ought to be developed together and in tandem for holistic human existence. Indeed, the mind assumes much more towards human existence than the body and hence developing mind is of greater importance. Mind is a well-studied aspect in Bharatiya knowledge tradition and the Upanishads give best examples to such studies. I must mention something very important here, that in European - Semitic tradition, there is no distinction between mind and soul, but in Bharatiya knowledge tradition, soul is distinct from both mind and self. This distinction makes huge differences in approaches as well as understanding of the mind, and then to weave out an understanding of man. This difference does persist in most of our thinking and doing.

Modern studies indicate three aspects of the mind, even with European perspectives. One is the intellect what they quantify through objective tests towards 'Intelligence Quotient'. Subsequently they also added 'Emotional Quotient' and 'Spiritual Quotient' to their concept of mind-man; giving much room to the transcendental from a Bharatiya per-

spective. Previously the study centred mostly around what they call as 'Cognitivism' that Maharishi Gautama called as 'Indriyartha Sannikarsha' or sense-object-contact in his Nyayasutra. It took time for Europe to realise that 'intellection' or mere intellectual knowledge is nowhere sufficient in man making, and there are other serious aspects also to man making. Then it was discussions about emotional aspects and emotional literacy etc., and eventually they understood that Spiritual aspect, or spiritual literacy is something much more important than cognitivism or intellection alone. Hence in the process of man making, (in the European category) training ought to be given in these three aspects with due importance. Whether or not the European societies practice their knowledge is open for inspection, perhaps they are still in the process of 'enlightening' people.

Bharatiya Sanskriti

Bharat has a readymade pattern of imparting knowledge through Sanskriti. Sanskriti is not a 'cognitive' concept, and on the contrary, it is an 'experiential' concept. Experiencing Sanskriti is trans-sensory, hence it appears vague or unclear to European category of intellection – cognitivism – of sense object contact experience. Experiential is trans sensory,as in the case of 'Yogaj' the Yogic Perception. Maharishi Aurobindo was found facing the same predicaments while trying to speak about the Vedas, he was reasonably influenced in European methodology of knowing initially, but he shifted focus and did discuss Vedas, of experientially knowing and eventually wrote the famous book, 'Secret of the Vedas'.

Sanskriti has to be experienced, or felt from within. Bharatiya knowledge tradition has an inbuilt method of making Sanskaris out of her citizens, and one of the easy method is through the Vedic – Hindu Dharma, where everything becomes very naturally easy. The 'enigmatic' Sanskara slowly sets in to members of the society through an automatic process of Dharma, which is most often cherished by the members of the society. What European knowledge tradition realised very late, what European knowledge tradition is not finding answers as to how to impart, had been in active practice in Bharat right from the Vedic days of Saraswati Civilisation.

The role of Guru

Bharat has ideas of Gurus, Acharyas and Upadhyayas. Upadhyayas and Acharyas are rather similar, but Guru is totally a different thought. Guru is supposed to be functional to whoso-

ever and whatsoever, but Acharyas are often limited to student community. Acharyas are really man making people, and they had been doing such deft job beyond words to surrender, but then their work is often confined to the seekers alone. Guru goes out to anyone, he knows who deserves what and intervenes to instruct. Interventions are hardly resisted, because of his conspicuous authority.

Guru reaches out to one and all to instil Sanskriti and to make individuals Sanskaris. We already pointed out that Bharatiya Sanskriti is everything human in capsulated form, that really creates this tremendous shortcut to meaningful human existence as Bharatiya. It is interesting to ponder upon an evolution of Sanskriti. To begin with we have the Vedopanishadic knowledge tradition. Vedopanishadic knowledge system is practically translated into action and existential situations through what came to be known as Sanskriti. Some try to understand the inbuilt meaning of various Sanskaras, and in such cases, they end up going into the Vedopanishadic knowledge system for both 'cognitive' and 'experiential' comprehensions. But for most people, Sanskriti itself is an authority, and they follow whatever had been instructed to live meaningful and authentic human existence. This explains a usual phenomenon that people often come across, particularly in our villages, where elders may find educated people not up to the desired mark. We then find wise old villagers say that though he is educated, he doesn't know anything, and they usually end up finding fault with such education system.

Education system

Explicitly speaking, our education system had been patterned by the congress rule, and in the congress rule, the communists and such anti Bharatiyas created syllabi and text books. And this had been going on for all these years, where a sudden reversal is not possible. Nonetheless, a gradual reversal can be thought about, with the new pulse of nationalism in the making, offing and is rapidly getting head way. But this has to take its own time, slowly, but steadily, and indeed for sure.

The scenario is difficult. Already there are existing patterned knowledge system created by the agencies of the old, and this had set into the minds through time. This makes the task double, we have to present the Bharatiya version along with the available perverted version, with sufficient demonstration of Bharatiya knowledge and how it had been perverted and for what reasons. Once this could be done, then let us leave it to the young minds to decide what is what.

Acharya, or Shikshak turning into Guru

Perhaps the dire need of present time is of producing Acharyas who are akin to Bharatiya Gurus. At least to the students present in front of us, we could say about both European and Bharatiya knowledge tradition, and wherever it is possible about the knowledge mutilations and for what reasons. The reasons why these mutilations are so meticulously done is obvious, it is for the same reason that McCauley and company planned the then education, to bring Bharatiya 'Swabhimana' to an all-time low. The root of Bharatiya Swabhimana rests in the Vedopanishadic knowledge tradition, that has been rendered as obsolescence by the so-called liberals and progressive in a huge disguise. The Shikshak must demonstrate how refined is Bharatiya knowledge tradition, the Vedopanishadic knowledge tradition, through a deft comparison with European knowledge tradition. They are recent, and shall take longer time to evolve, we had gone through the process of evolution and refinement through many minds and generations.

Shikshak has to assume the role of a Guru to do such things, no matter how small or limited his of operation is. One student is sufficient, to light this lamp as just one student shall show light to many who are to follow.This is the least we can think of doing at the present situation, but this small thing shall go a long way. In one way this is good, good in the sense that here we are entirely autonomous. We need not depend on anything and anyone, we just have to fill in Bharat within us and go about teaching. At least here, in this case, everything is totally in the hands of individual teachers, teachers of all kinds and all levels. We must go ahead and making Bharat from India. ❑

(Professor of Philosophy, The Maharaja Sayajirao University of Baroda)

Our school going students have stood second from bottom, in a comparative evaluation made under the 'Programme for International Students Assessment' (PISA), being conducted among the 15-year old school students of 73 countries. Regarding the employ-ability- percentage of students, graduating from universities, various agencies in the country put it at 07 to 45 percent for students of different streams. To better this score at a faster pace, we have to enrich and complement our lecture and discussion dominated pedagogy, often leading to monotony in learning need to be broad based by three of the major "gogies" (pedagogy andragogy and heutagogy), supported by the seven similar gogies like (i) critical pedagogy, (ii) ecopedagogy, (iii) ubuntugogy, (iv)creative pedagogy (v) peeragogy, (vi) hip-hop critical pedagogy and (vii) public pedagogy.

New Pedagogical Approaches for Effective Gurus

❑ **Prof. Bhagwati Prakash Sharma**

India has 4 crore students en rolled in higher education, more than the total population of Canada. But, many employers do not consider a large number of the graduating students employable. Every year even some of the IITs also terminate several students for poor performance. Both of these can largely be remedied by employing a proper combination of pedagogical approaches. To make the students passing out from various streams better employable by facilitating effective learning, by combining suitable modern approaches of adult learning (andragogy), self directed learning (heutagogy) etc. in addition to the conventional pedagogies which focus to facilitate child learning. Likewise, a suitable combination of appropriate transition pedagogies should be employed to better familiarise and engage the students in learning, and to avoid the ugly state of poor performance, necessitating termination of students; who get admission only after the fiercest of the admission-competition in the country. Therefore, the present paper attempts to give a brief overview of some of the modern approaches capable to optimize learning through better customized blend of teaching approaches and help the students smoothly transit in the institutes of higher learning.

A host of new teaching-learning approaches have evolved in the preceding 2-3 decades to facilitate better learning, especially for adult learning, self directed learning and peer to peer learning, hitherto unheard and never employed before to supplement the conventional pedagogies focused at child learning (peda/pedo/paedo= child). These newer learning facilitating approaches in addition to the conventional pedagogical approaches are:

(i) andragogy,
(ii) heutagogy,
(iii) critical pedagogy,
(iv) ecopedagogy,
(v)ubuntugogy,
(vi) creative pedagogy,
(vii) peeragogy,
(viii) hip-hop critical pedagogy
(ix) public pedagogy
(x) transition pedagogy

The conventional methods and

techniques of teaching-learning like lecture method, discussions slide shows etc. need to be complemented with a blend of newer approaches, including various newly emerging pedagogical, andragogical, heutagogical, peeragogical and similar other approaches to enhance knowledge, skills and capabilities of graduating students in the today's hypercompetive knowledge-driven economy. Moreover, to remedy the problem of poor employability of graduating youth, appropriate blending of pedagogical, ragogical, and heutagogical, peeragogical and other modern approaches of teaching is necessary in our colleges and universities. This paper therefore, attempts to elucidate some major approaches or gogies out of the 10 such gogies or approaches in vogue, viz the pedagogy, andragogy and heutagogy. The various approaches of teaching or gogies which can help in enhancing the efficacy of teaching and educating are: pedagogy, andragogy, heutagogy, critical pedagogy, ecopedagogy, ubuntugogy, creative pedagogy, peeragogy, hip-hop critical pedagogy and public pedagogy. The present day teaching faculty needs to be familiarized and equipped to employ these neo-advanced teaching techniques, appropriately with comfort, to make their students or pupils better employable.

Indeed, enabling of the students to optimally learn and to prepare them for the forthcoming competitive era, teaching approaches need to be customized to equip the students with the knowledge, skills and competencies needed to thrive in such a hypercompetitive economy. Modern day teachers and educators need to embrace ever newer methodologies that are more relevant to the exigencies of today's learning (Educators technology.com 12 Nov 24, 2013). Andragogical and heutagogical approaches, along with other newer evolving gogies need to complement the conventional pedagogical approaches. India has a vast number of 32.5 crore students enrolled in 13.96 lakh schools, almost equal to the total US population , and 3.5 crore students, almost equal to the total Canadian population, enrolled with 830 universities and 45000 colleges. But, such vast mass of our students fare very badly, when compared internationally. Our school going students have stood second from bottom, in a comparative evaluation made under the 'Programme for International Students Assessment' (PISA), being conducted among the 15-year old school students of 73 countries. Regarding the employability- percentage of students, graduating from universities, various agencies in the country put it at 07 to 45 percent for students of different streams. To better this score at a faster pace, we have to enrich and complement our lecture and discussion dominated pedagogy, often leading to monotony in learning need to be broad based by three of the major "gogies" (pedagogy andragogy and heutagogy), supported by the seven similar gogies like (i) critical pedagogy, (ii) ecopedagogy, (iii) ubuntugogy, (iv)creative pedagogy (v) peeragogy, (vi) hip-hop critical pedagogy and (vii) public pedagogy.

The present paper instead of explaining all the ten "gogies", which have a spread of a full separate monograph, would focus upon some of the easily employable and hyper-effective techniques. However, it would yet not be out of context to explain the three premier 'gogies' (pedagogy, andragogy and heutagogy) to facilitate better understanding of the conduct of such approaches employed under the guise of the three gogies.

The Pedagogical model of instruction was originally developed in the monastic schools of Europe in the Middle Ages. Pedagogy is derived from the Greek word "Paed" or ''Pedo" or ''Ped" meaning child, plus "agogos" meaning leading. As such, young boys were received into the monasteries and taught by monks according to a system of structured instruction that required these children to be obedient, faithful and efficient servers for the church (Knowles 1984). Hence, now in cosmopolitan secular culture as well pedagogy has been defined as the art and science of teaching children. It is based on the assumption that learners need to know, what the teacher teaches them (Hiemstra & Sirco 1990). The result is a teaching and learning situation that actively promotes dependency on the instructor (Knowles: 1984). But, unlike children, the adults with their maturity, and experience need to be educated with andragogical approaches and also through self directed (heutagogical) approaches to the problem solving, depict least interest and involvement in the pedagogical approach of instruction, suited more to teach children, resulting into poor compatibility of the learners to cope with the ever newer real life problems and challenges, emerging out of the rapidly changing scenario.

Androgogy

Andragogy and its Underlying Assumptions

The growth and development of andragogy as an alternative model of instruction has helped to remedy this situation and improve the teaching of adults (Hiemstra & Sisco: 1990). According to Julie et. al, andragogy is the art and science of helping adults learn. Malcolm Knowles (1978, 1990) while introducing the concept of adult learning for the first time has argued that adulthood can be said to have arrived, when people behave in adult ways and adopt independent approach in viewing things, solving problems and exploring ways to solve the same. By this criterion a student even at degree level itself, be treated adult and needs to be educated with andragogical approach. Burns (1995, P. 233) also opines the same by saying that, at adulthood people are self directing. Hence, the andragogical approach in management education has to be more and more student centered, experience based, problem oriented and collaborative to facilitate learning instead of merely transmitting the theoretical concepts of textbooks through lectures, audio visual techniques and other programmed instructional pedagogy. According to Knowles (1978, 1990) adult learning is special in a number of ways and is based upon the following assumptions.

- Adult learners bring a great deal of experience to the learning environment. Educators can use this as a resource.
- Adults expect to have a high degree of influence on what they are to be educated for, and how they are to be educated.
- The active participation of learners should be encouraged in designing and implementing educational programs.
- Adults need to be enabled to see applications for new learning.
- Adult learners expect to have a high degree of influence on how learning will be evaluated.
- Adults expect their responses to be acted upon when asked for feedback on the progress of the program.

Distinctive Attributes

Based on the above assumptions of adult learning, the pedagogical approach of transmit

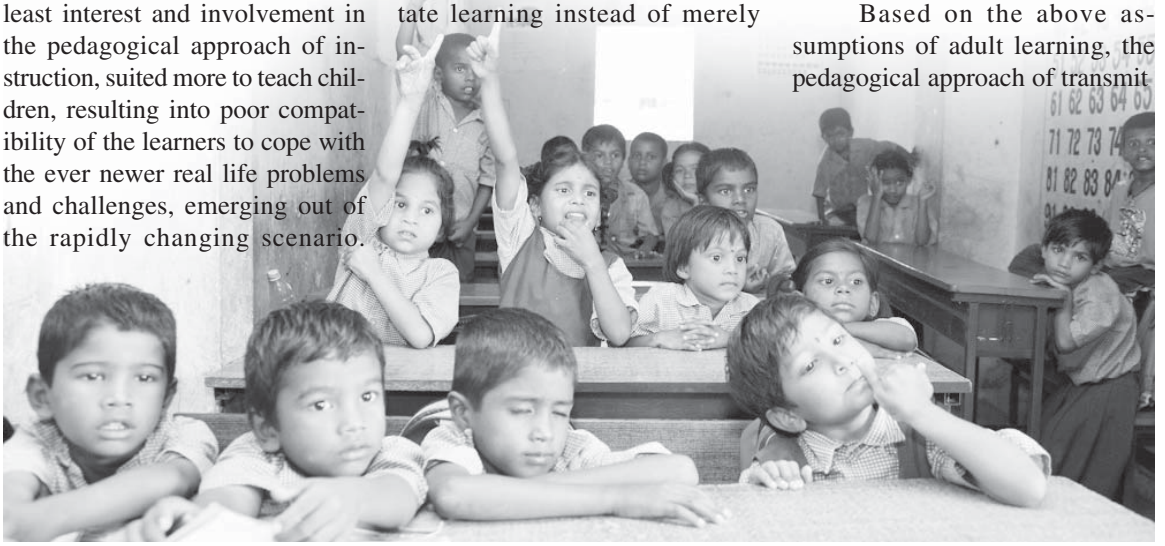

ting knowledge in management education can be distinguished from the andragogy on following four counts:

(i) Teacher Learner Roles
(ii) Learning Resources and Techniques
(iii) Motive
(iv) Focus

Theories of adult Learning

Andragogical approach in learning helps to overcome many of the limitations encountered by lecture and audio-visual presentation based classroom teaching. Over dependence on this latter approach results in poor learning. Classroom learning is often dubbed as inefficient method of education. According to Stewart (2001: p 184) half the people in class often secretly work on their "real" jobs; half are so relieved not to be doing their real jobs, they have turned their minds entirely off. Half already know, half the stuff being taught. Half will never need to know more than half of it. Hence andragogical approach draws its strength from the following major theories of adult learning:

1. Action Learning
2. Experiential Learning
3. Project Based Learning
4. Self Directed Learning

Their relevance can be better understood from Table 2, an abridged form of the table created by Mandy McEntyre and Jenn Pahl(2006).

Complementarity of Pedagogy Andragogy and Heutagogy:

Andragogy is though, a distinctive model for educating adult students of business studies, but need not be seen as dichotomous with pedagogical approach. Rather, the two approaches (Pedagogy and andragogy) are to be seen as two ends of a spectrum to be used in proper blend (Knowles: 1980). The pedagogical and andragogical techniques that can be appropriately blended for optimum learning along with heutagogy. They are not mutually exclusive, but complementary to enhance reciprocal efficacy. The techniques of teaching falling under the three gogies can be enumerated as under:

Heutagogy:

Heutagogy is basically a learner centric technique and is focused on 'self determined learning'. Thus, where as the andragogy grew out of the term pedagogy, heutagogy was created as an offshoot of andragogy. We see that in Hase and Kenyon's 2001 article entitled, "From Andragogy to Heutagogy." Heutagogy maintains the andragogical learner-centered emphasis, but takes it a step further by also highlighting the importance to develop the skills necessary to learn on one's own. As such, heutagogy is often described as the study of self-determined or self-directed learning. It is not just about learning content, but also learning how to learn. It is an especially relevant approach in the digital age, given the vast amount of content and resources available to anyone with a device and Internet access. Given so much information, how can people learn to leverage these resources to engage in lifelong learning? Where pedagogy and andragogy continue to reflect to some degree upon the role of the teacher, heutagogy moves beyond this, focusing exclusively on the learner and this notion of self-directed learning. As explained by Hase and Kenyon, "the learner decides what and how to learn."[Bernard Bull: 2013 April 23]

Indian universities and colleges need to assimilate and adopt appropriate andragogical, heutagogical and other suitable approaches, along with the conventional pedagogical approaches to improve transmission of knowledge as well as to upgrade skills and capabilities to overcome the problem of poor employability of Indian graduates. A recent study of Aspiring Minds (a New Delhi based employment solutions company) published in India Today in Education, dated July 13, 2016, alleges that only 7% of India's engineering graduates are employable and another study of ASSOCHAM published on July 11, 2016 alleges that 93% of country's MBA graduates are not employable. The figures of employability have come down in last 3-5 years. Same is true with accounting professionals and other graduates. A pedagogical advancement and optimization (including that of the andragogical and heutagogical as well other seven gogies) becomes indispensable to enhance learning and improve student capabilities. So, the modern gurus have to equip themselves with the various denova and emerging gogies of teaching to better engage and turnout well employable alumini. On top of all a host pedagogies have also evolved for deep ingraining of ethics and values in the conduct and behavior of the learners. Modern gurus have to master such pedagogies as well. ❑

(Vice-Chancellor, Pacific Academy of Higher Education and Research University, Udaipur)

रुक्टा (राष्ट्रीय) द्वारा अजमेर में आयोजित प्रदेश विचार वर्ग

विचार वर्ग को सम्बोधित करते हुए पैसेफिक विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो. भगवती प्रकाश शर्मा

विचार वर्ग के शुभारम्भ में परिचय सत्र

विचार वर्ग को सम्बोधित करते हुए विचारक, चिन्तक, लेखक एवं सामाजिक क्षेत्र के अध्येता श्री हनुमान सिंह राठौड़

सम्बोधित करते हुए प्रज्ञा प्रवाह के राष्ट्रीय संयोजक श्री जे. नन्दकुमार

रुक्टा (राष्ट्रीय) की प्रदेश कार्यकारिणी अजमेर में सम्पन्न

अ.भा. राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ-उच्च शिक्षा संवर्ग ओडिशा द्वारा भुवनेश्वर में राज भवन के समक्ष महाविद्यालयीन शिक्षा में उडिया व संस्कृत विषय रखे जाने हेतु धरना तथा ज्ञापन देने जाते हुए उच्च शिक्षा संवर्ग अ.भा. प्रभारी श्री महेन्द्र कुमार एवं अन्य

राजस्थान शिक्षक संघ (राष्ट्रीय) का फलोदी में आयोजित प्रदेश महासमिति अधिवेशन

दीप प्रज्वलन कर संबोधित करते हुए राजस्थान के शिक्षा राज्य मंत्री प्रो. वासुदेव देवनानी जी

मध्यप्रदेश शिक्षक संघ की नवनिर्वाचित प्रदेश कार्यकारिणी के शपथविधि समारोह का उद्घाटन कर सम्बोधित करते हुए म.प्र. के स्कूली शिक्षा मंत्री श्री कुँवर विजय शाह

नवनिर्वाचित प्रदेश कार्यकारिणी को शपथ विधि कराते हुए अखिल भारतीय संगठन मंत्री श्री महेन्द्र कपूर

देशीय अध्यापक परिषद (NTU) केरल के वार्षिक कलेण्डर का विमोचन करते हुए प्रदेश पदाधिकारी

सौराष्ट्र विश्वविद्यालय शैक्षिक संघ, राजकोट इकाई बैठक को सम्बोधित करते हुए राष्ट्रीय सचिव प्रो. प्रगनेश शाह

राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ, गुजरात की प्रदेश कार्यकारिणी को सम्बोधित करते हुए अ.भा. संगठन मंत्री श्री महेन्द्र कपूर

राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ, उ.प्र. के प्रदेश कार्यकर्ता अभ्यास वर्ग के समापन पर संबोधित करते हुए अ.भा. संगठन मंत्री श्री महेन्द्र कपूर

विनोबा भावे विश्वविद्यालय शैक्षिक संघ, झारखण्ड इकाई सम्मेलन को सम्बोधित करते हुए कुलपति डॉ. रमेश शरण जी

अ.भा. राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ-उच्च शिक्षा संवर्ग झारखण्ड प्रदेश बैठक को रांची में संबोधित करते हुए प्रान्त प्रचारक श्री रविशंकर

राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ हरियाणा प्रदेश कार्यकर्ता वर्ग को सम्बोधित करते हुए अ.भा. संगठन मंत्री श्री महेन्द्र कपूर

रेशम बाग, नागपुर में आयोजित महाराष्ट्र राज्य शिक्षक परिषद का प्रदेश कार्यकर्ता अभ्यास वर्ग सम्पन्न

भारत की संतान अपनी माँ को भूल जाय, अंग्रेजों की यह कुटिल चाल भी धीरे-धीरे सफल होती दिखाई दे रही है। दुनिया जानती है कि जन्म देने वाली माँ से संस्कार लेकर गंगा, गीता, गौ एवं अपने देश की धरती को माँ के रूप में ही हमने स्वीकार किया है। माँ का नाता भूल जाने वाला समाज संसार में अपना सम्मान खो देता है। आजाद, भगत सिंह, सुभाष गुरुगोबिन्द सिंह, गाँधी, डॉ. हेडगेवार ने तमाम यातनायें सही तथा भारत माता की पुकार सुनकर अपना सर्वस्व समर्पित कर दिया। इस आत्म विस्मृतता को दूर करने का मार्ग देश की शिक्षा संस्थाओं की चाहरदीवारी के अन्दर से ही निकलेगा इसलिए शैक्षिक वातावरण को देशभक्ति से परिपूर्ण तथा संस्कार क्षम बनाने की व्यवस्था भी सुनिश्चित करनी होगी।

वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में बदलाव की आवश्यकता

❑ **साकेन्द्र प्रताप वर्मा**

केवल ईंटों की इमारत या बालकों और शिक्षकों का समूह ही विद्यालय नहीं होता है। वस्तुतः विद्यालय होता है एक जीवमान इकाई जहाँ पर संस्कार ग्रहण करके युवा पीढ़ी अपनी भूमिका का निर्धारण करती है तथा आगामी जीवन का लक्ष्य निश्चित करती है। विद्यालय का संस्कारक्षम वातावरण इसमें सहायक होता है। यह वातावरण ही उस विद्यालय की परिपाटी या परम्परा हुआ करता है तथा इसी परम्परा पर उसको सदैव गर्व की अनुभूति हुआ करती है। जैसे काशी हिन्दू विश्वविद्यालय ने यदि स्वाधीनता सेनानियों का निर्माण किया तो अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय ने पाकिस्तान के निर्माण में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की। कॉन्वेन्ट स्कूलों ने यदि अंग्रेजी के मानसिक दास उत्पन्न किये तो 1907 में राष्ट्रीय विद्यालयों ने क्रांतिकारियों के निर्माण में बहुत सहयोग किया। यदि प्रयाग के मेयो छात्रावास को प्रशासनिक अधिकारी बनाने पर गर्व है तो मिलिट्री शिक्षा को सेना संचालकों का निर्माण करने में अपनी विशेष पहचान दिखाई देती है। इसी पहचान के निर्माण के लिए विद्यालय का प्रत्येक प्राणी पग-पग पर सचेष्ट दिखाई देना चाहिए। इसके लिए अतुलित साधन नहीं अडिग निष्ठा, एकाग्र दृष्टि और सतत् प्रयत्न करने की मनोवृत्ति होनी चाहिए। अपनी यह पहचान राष्ट्र के मानचित्र की सीमाओं को सुरक्षित रखने वाली अवश्य होनी चाहिए अन्यथा आगामी पीढ़ी उस राष्ट्र की मूल भावनाओं के विपरीत अपना व्यवहार करने लगती है।

इतिहास गवाह हैं कि हम कभी जगत्गुरु थे, हमारा देश सोने की चिड़िया कहलाता था। भारत का ज्ञान, विज्ञान और तकनीक सारी दुनिया को मार्गदर्शन देता था अर्थात् जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में हम अग्रणी थे। मन्दिरों के हीरे जवाहरात तथा सम्पन्नता के वैभवशाली दृष्यों को देखकर विदेशियों की ललचायी निगाहों ने भारत को लूट-लूट कर खोखला कर दिया। तख्ते-ताऊस चला गया, कोहिनूर हीरा चला गया, ढाका का मलमल बनाने वाले कारीगरों के अँगूठे काट लिये गये किन्तु अपने देश की युवाशक्ति ने प्रत्येक कदम पर अपना बलिदान देकर देश की रक्षा की। यह बलिदान देने की प्रेरणा किसी भी पीढ़ी को उसके शिक्षकों या मार्गदर्शकों के द्वारा ही मिला करती है। हम जानते हैं प्राचीन काल में यदि देश की बिगड़ी हुई तस्वीर को सँवारा जा सका है तो वशिष्ठ जैसे गुरु और राम जैसे शिष्य, संदीपनी जैसे गुरु

और कृष्ण जैसे शिष्य, समर्थ गुरु रामदास जैसे गुरु और शिवाजी जैसे शिष्य, चाणक्य जैसे गुरु और चन्द्रगुप्त जैसे शिष्य की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। शिक्षक और शिक्षार्थी के इस संबंध को समझने की आवश्यकता है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् देश की शिक्षा व्यवस्था का यह स्वरूप प्रस्तुत करने का प्रयत्न नहीं किया गया क्योंकि देश के शिक्षक को केवल कर्मचारी के रूप में प्रस्तुत करने की बहुत बड़ी भूल करने के साथ ही विचित्र पाठ्यक्रम का निर्धारण कर दिया गया। जिसके फलस्वरूप विद्यालय में राष्ट्र के प्रति कुछ करने की प्रेरणा मिलने की कोई दिशा नहीं तय की गयी। संभव है कि देश की आजादी के बाद देश के अन्दर सड़कें, कल कारखाने, नहरें तथा आवागमन के साधन बढ़ गये हों किन्तु मनुष्य की मनुष्यता तथा देश के प्रति कुछ कर गुजरने की क्षमता निरन्तर कम होती जा रही है। व्यक्तिगत स्वार्थों में डूबते जा रहे अपने देश को बचाने का एक मात्र उपाय है संस्कार युक्त देशभक्ति से परिपूर्ण तथा स्वावलम्बी शिक्षा व्यवस्था।

दुनिया में भटकता हुआ अंग्रेज जब इस देश के अन्दर आया तो उसने सबसे पहले देश की शिक्षा व्यवस्था बदलने का प्रयत्न किया। हमारे इतिहास, साहित्य, जनजीवन, जीवन मूल्य तथा जीवन के प्रति दृष्टिकोण में विकृतियाँ लाने का सतत् प्रयत्न अंग्रेजों ने किया जिसके परिणामस्वरूप हम अपने आपको भूलने लगे और अंग्रेजियत का भूत हमारे सिर पर चढ़कर बोलने लगा। इसी अंग्रेजियत से उत्पन्न मैकाले के मानस पुत्रों ने ही हमारी वेशभूषा, भाषा तथा जन-जीवन के संस्कार बदल दिये। 'माँ सबसे मधुर शब्द है तथा सृष्टि में जन्म लेने वाला प्रत्येक प्राणी सर्वप्रथम इसी शब्द का उच्चारण करता है। माँ और सन्तान का नाता अमर है। माँ की पुकार पर सन्तान और सन्तान की पुकार पर माँ बैचेन होकर दौड़ पड़ती है। अंग्रेजियत के कारण 'माँ' शब्द भी हमसे छिनता जा रहा है और 'मम्मी' शब्द का प्रयोग संतान और माँ के सम्बन्धों को भुलाने लगा है।

भारत की संतान अपनी माँ को भूल जाय, अंग्रेजों की यह कुटिल चाल भी धीरे-धीरे सफल होती दिखाई दे रही है। दुनिया जानती है कि जन्म देने वाली माँ से संस्कार लेकर गंगा, गीता, गौ एवं अपने देश की धरती को माँ के रूप में ही हमने स्वीकार किया है। माँ का नाता भूल जाने वाला समाज संसार में अपना सम्मान खो देता है। आजाद, भगत सिंह, सुभाष गुरुगोबिन्द सिंह, गाँधी, डॉ. हेडगेवार ने तमाम यातनायें सही तथा भारत माता की पुकार सुनकर अपना सर्वस्व समर्पित कर दिया।

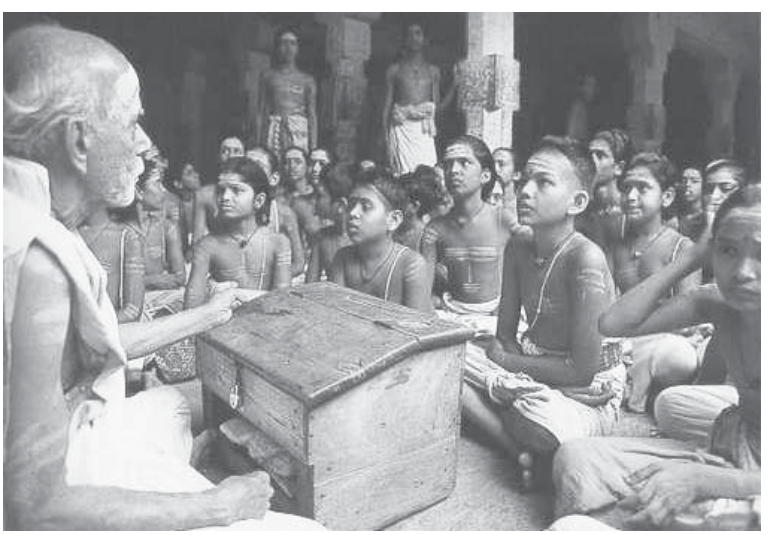

इस आत्म विस्मृतता को दूर करने का मार्ग देश की शिक्षा संस्थाओं की चाहरदीवारी के अन्दर से ही निकलेगा इसलिए शैक्षिक वातावरण को देशभक्ति से परिपूर्ण तथा संस्कार क्षम बनाने की व्यवस्था भी सुनिश्चित करनी होगी। नैतिक और देशभक्ति विहीन शिक्षा प्रणाली को आधार मानकर देश 21वीं सदी में दुनिया का मुकाबला करने का प्रयास कर रहा है। इसी का परिणाम है कि भारत की जो संसद और विधान सभायें देश को मार्गदर्शन दिया करती थी वहाँ पर इस देश के जीवन मूल्य, भारत के संविधान तथा राष्ट्रीय पहचान के प्रति उदासीनता दिखाई दे रही है। घोटालों में लिप्त राजनेता, राजनैतिक उथल-पुथल, राजनीति का अपराधीकरण, जातिवाद का जहर, भ्रष्टाचार की पराकाष्ठा तथा देश की सीमाओं और आम आदमी की असुरक्षा भारत की गम्भीर चुनौती है। व्यक्तिगत सुख और स्वार्थों में देश का आम आदमी अपना सब कुछ लुटाता जा रहा है। टालस्टाय की एक प्रसिद्ध कहानी है- राजा ने एक व्यक्ति से कहा कि सूर्योदय से सूर्यास्त तक तुम जितनी जमीन पर दौड़ोगे उसके मालिक तुम हो जाओगे। उसने दौड़ना शुरू किया, धीरे-धीरे उसका दम फूलने लगा किन्तु अधिकतम जमीन का स्वामी बनने का लालच उसे रुकने नहीं दे रहा था। शाम होने से पहले ही उसका दम उखड़ गया और वह मर गया। टालस्टाय ने लिखा है कि जब उसे दफनाया गया तो मात्र साढ़े तीन गज जमीन की ही उसे जरूरत थी।

स्वार्थवाद के इस युग में भारत को बचाने का उपाय खोजकर देश की वर्तमान शिक्षा प्रणाली को मैकाले की मानसिक दासता से मुक्ति दिलाकर सर्वांगीण विकास पर आधारित शिक्षा प्रदान करने की व्यवस्था सुनिश्चित करना परम आवश्यक है उसी में हम सबका हित निहित है। राष्ट्रीय पुर्ननिर्माण की दिशा का निर्धारण हम सभी के सद्प्रयत्नों के द्वारा ही होने वाला है। ❑

(सदस्य विधानसभा, उत्तरप्रदेश)

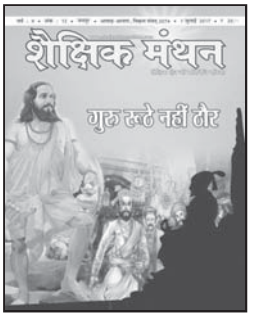

शिक्षा में आम्बेडकर की भूमिका

❑ **डॉ. कुलदीप चन्द अग्निहोत्री**

महाराष्ट्र में सामाजिक क्रान्ति के अग्रदूत ज्योतिबा फुले ने कहा था, शिक्षा के अभाव में बुद्धि जड़ हो गई। बुद्धि जड़ हो जाने से नीति समाप्त हो गई । नीति समाप्त हो जाने से गति रुक गई। गति अवरुद्ध हो जाने के कारण धन गँवा दिया। धन न होने से शूद्रों का विनाश हो गया। एक अशिक्षा ने इतने अनर्थ किए। (हनुमान सिंह राठौड़ , बाबा साहब डा. भीमराव आम्बेडकर शैक्षिक अवदान, पृष्ठ 59-60 से उद्धृत) लेकिन अछूतों या दलितों को शिक्षा के अधिकार से कब और किसने वंचित किया, यह जानना अत्यन्त जरूरी है ।इस विषय के प्रामाणिक विद्वान आचार्य धर्मपाल ने बहुत ही परिश्रम करके कुछ तथ्य एकत्रित किए हैं, जो किसी व्याख्या के मोहताज नहीं हैं। धर्मपाल ने प्रमाण देकर सिद्ध किया कि अंग्रेजों के आने से पहले तो देश के कोने-कोने में शिक्षा की व्यवस्था थी जिसमें सभी जातियों के सदस्यों को शिक्षा प्राप्त करने का समान अवसर मिलता था। अंग्रेजों ने यहाँ आकर उस व्यवस्था को सबसे पहले भंग किया। उसका सबसे ज्यादा नुकसान दलित वर्ग को ही उठाना पड़ा। आम्बेडकर ने इस परम्परा को पुन: पटरी पर लाने के बहुत प्रयास किए। उनकी तमन्ना थी कि यदि दलितों को भी पढ़ने का अवसर मिले तो वे समाज में अपना प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त कर लेंगे। आम्बेडकर, ज्योतिबा को अपना गुरु मानते थे। भीम राव आम्बेडकर ने देश के निर्धन और वंचित समाज को प्रगति करने का जो सुनहरी सूत्र दिया था, उसकी पहली इकाई शिक्षा ही थी। इससे अन्दाजा लगाया जा सकता है कि वे गतिशील समाज के लिये शिक्षा को कितना महत्त्व देते थे। उनके तीन सूत्र थे- शिक्षा, संगठन और संघर्ष। वे आह्वान करते थे, शिक्षित बनो, संगठित होओ और संघर्ष करो। केवल स्वयं के शिक्षित होने से काम नहीं चलेगा। इसलिए वे कहा करते थे, पढ़ो और पढ़ाओ। इस सूत्र का अर्थ स्पष्ट है कि संगठित होने और न्याययुक्त संघर्ष करने के लिये प्रथम शर्त शिक्षित होने की ही है। इस मामले में बाबा साहेब की दृष्टि एकदम साफ है। साधन सम्पन्न समाज के बच्चों के लिये जीवन में प्रगति के अनेक रास्ते हैं। वे अपने पैतृक साधनों का प्रयोग कर नये रास्ते तलाश भी सकते हैं और पहले से ही उपलब्ध रास्तों का अपने हित के लिये सुविधा से उपयोग भी कर सकते हैं। कम से कम जीवन की भौतिक

शिक्षा का इतना महत्त्व है तो शिक्षा देने वाले शिक्षक का महत्त्व तो उससे भी कई गुणा बढ़ जाता है । क्योंकि शिक्षा केवल किताबों से नहीं मिलती, वह शिक्षक के आचरण व व्यवहार से भी मिलती है । शिक्षा संस्कार बनाती है और संस्कार शिक्षक के आचरण से ही बनते हैं ।इसलिये शिक्षा के मामले में बाबा साहेब, शिक्षक की भूमिका और चयन को लेकर अत्यन्त सतर्क रहते थे। वे मानते थे कि, 'शिक्षक राष्ट्र का सारथी होता है ।इसलिए शिक्षक बुद्धि से होशियार, वृत्ति से निरीक्षक व मर्मज्ञ होना चाहिए क्योंकि शिक्षा के द्वारा मनुष्य का आत्मिक उन्नयन होता है और वह तभी हो सकता है जब शिक्षक योग्य होगा ।(दत्तोपन्त ठेंगडी, डॉ. आम्बेडकर और सामाजिक क्रान्ति की यात्रा, पृष्ठ 98) जाहिर है शिक्षा के क्षेत्र में आम्बेडकर एक प्रकार से गुरु-शिष्य परम्परा के समर्थक हैं ।

प्राप्तियों के क्षेत्र में तो यह सब हो ही सकता है। लेकिन वंचित समाज के बच्चों के लिये, साधनों के अभाव में आगे के रास्ते प्राय: बन्द ही रहते हैं और क्या वे जीवन भर दुख और वेदना का नारकीय जीवन ही ढोते रहेंगे ? ऐसा नहीं है। उनके लिये एक ऐसा रास्ता खुला है, जो साधन सम्पन्न लोगों को उपलब्ध सभी रास्तों से भी ज़्यादा प्रभावी और गुणकारी है। वह रास्ता है शिक्षा प्राप्त करने का। शिक्षा से भौतिक जगत में गतिशील होने की क्षमता तो प्राप्त होती ही है, बौद्धिक क्षमता का विकास भी होता है। आम्बेडकर मानते थे कि 'दलित वर्ग के लिए महत्त्व का प्रश्न, उसे उन कारणों का अहसास करवा देना ही है जिन से उनकी प्रगति बाधित होती है और उन्हें दूसरों का दास बन कर रहना पड़ता है। उनकी यह हीनता ग्रन्थी दूर कर, वर्तमान समाज प्रणाली के कारण उनकी जो लूट हुई है उसको जान लेना उसके स्वयं के और राष्ट्रीय हित के लिए भी बहुत महत्त्व का है। उच्च शिक्षा के प्रसार के अलावा अन्य किसी भी तरीके से यह साध्य नहीं है। हमारे सारे सामाजिक दुख की उच्च शिक्षा ही एकमात्र औषधि है।' (दत्तोपन्त ठेंगडी, डॉ. आम्बेडकर और सामाजिक क्रान्ति की यात्रा, पृष्ठ 98-99) यही कारण था कि बाबा साहेब ने शिक्षा को प्राथमिकता दी है । ऐसा उन्होंने कहा ही नहीं बल्कि स्वयं अपने उदाहरण से करके भी दिखाया ।

बाबा साहेब ने उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिये अनेक कष्ट सहे, लेकिन उच्च शिक्षा प्राप्त करने के अपने ध्येय पर अडिग रहे। पाठशाला के दिनों में जाति भेद को लेकर उनको जो दिक्कतें उठानी पड़ीं, उनको शायद दोहराने की जरुरत नहीं है , वे सर्वविदित ही हैं । लेकिन जैसे ही आगे पढ़ने का वक्त आया, भीम राव के पिता की नौकरी समाप्त हो गई। वे सेना में सूबेदार थे। पुत्र में पढ़ने की और पिता में पढ़ाने की उत्कट लालसा और पैसे का संकट! नौकरी की संभावना तलाशने परिवार मुम्बई में आ गया। आम्बेडकर की आगे की पढ़ाई वहीं हुई। उन्होंने 1907 में दसवीं की परीक्षा पास कर ली। वहाँ के अस्पृश्य लोगों में दसवीं पास करने वाले भीमराव शायद पहले छात्र थे। बड़े शहर में जाति के कारण तो उतना संकट नहीं था जितना गाँवों में होता है लेकिन अब आर्थिक संकट गहरा रहा था। स्नातक की परीक्षा पास करने के लिए उन्हें महाविद्यालय में प्रवेश चाहिए था। उसके लिए साधन नहीं थे। लेकिन भीम राव आम्बेडकर ने हठ नहीं छोड़ा । श्री अर्जुन कृष्ण केलुस्कर जो गुरुजी के नाम से भी जाने जाते थे, ने भीमराव की भेंट बड़ौदा नरेश से करवा दी। महाराजा ने बीस रुपए प्रतिमास की छात्रवृत्ति नियत कर दी। 1912 में भीमराव ने बी.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण कर ली। आगे की कहानी अब अल्पज्ञात नहीं है। उस समय की वड़ौदा रियासत के महाराजा सयाजी राव गायकवाड द्वारा प्रदान की गई छात्रवृत्ति से भीमराव विदेश में उच्च शिक्षा के लिये गये और वहाँ विपरीत आर्थिक परिस्थितियों में भी अध्ययन जारी रखा। केवल इतना ही नहीं लन्दन में भी उनको चिन्ता रहती थी कि उनकी पत्नी रमाबाई भी कुछ पढ़ रही है या नहीं। धन सम्पदा तो आनी जानी है लेकिन शिक्षा जैसा अमोल धन अन्यत्र उपलब्ध नहीं है। उन्होंने लन्दन से अपनी पत्नी को पत्र लिखा, 'तुम्हारी पढ़ाई चल रही है, यह बहुत प्रसन्नता की बात है। पैसे की व्यवस्था करने का प्रयास कर रहा हूँ। मेरे पास पैसे नहीं हैं, इसलिये सीमित मात्रा में भोजन कर पा रहा हूँ। फिर भी आप लोगों की व्यवस्था कर पा रहा हूँ । पैसे भेजने में देर हुई और तुम्हारे पास के पैसे समाप्त हो जायें तो अपने अलंकरण बेच कर खाओ। आने के बाद फिर बनवा दूँगा। यशवन्त व मुकुन्द की पढ़ाई कैसी चल रही है?' (दत्तोपन्त ठेंगडी, डा. आम्बेडकर और सामाजिक क्रान्ति की यात्रा, पृष्ठ 96 से उद्धृत) आम्बेडकर का फ़रमान साफ है । पेट काट कर भी पढ़ना पड़े तो पढ़ाई को अधिमान दो। यह सारी कथा लिखने का उद्देश्य मात्र इतना ही है कि विदेश में जाकर उन्होंने शिक्षा से इतर, आर्थिक रूप से सम्पन्नता के लिये रास्ते तलाशने की कोशिश नहीं की। वे रास्ते उन दिनों भी अमेरिका व ब्रिटेन में सहजता से उपलब्ध थे । लेकिन बाबा साहेब ने स्वयं को ज्ञानार्जन के लिये ही समर्पित कर दिया। क्योंकि वे अच्छी तरह जानते थे कि वे केवल अपनी प्रगति का रास्ता नहीं तलाश रहे, बल्कि भारत के पूरे वंचित समाज की प्रगति का रास्ता तलाश रहे हैं और वह रास्ता केवल और केवल शिक्षा के माध्यम से ही निकलेगा। वे अपने आचरण से इसका उदाहरण प्रस्तुत करना चाहते थे। वडोदरा के महाराजा और भीम राव आम्बेडकर का यह संवाद जो चांगदेव खैरमोडे ने उद्धृत किया है, अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। बड़ौदा नरेश सयाजी गायकवाड और आम्बेडकर की यह बातचीत रियासत द्वारा आम्बेडकर को छात्रवृत्ति देकर उच्च शिक्षा के लिए भेजने से पहले की है ।

महाराजा- तुम किस विषय की पढ़ाई करना चाहते है ?

भीमराव- मैं समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र और विशेष रूप से पब्लिक फ़ायनांस की पढ़ाई करना चाहता हूँ ।

महाराजा- इस विषय की पढाई करके तुम आगे क्या करना चाहते हो ?

भीमराव- इस विषय के अध्ययन से मुझे इस प्रकार के रास्ते दिखाई देंगे, जिससे कि मैं अपने समाज की पतनावस्था को सुधार सकूँ ।

महाराजा (हँसते हुये)- लेकिन तुम हमारी नौकरी करोगे या नहीं ? फिर तुम पढ़ाई, नौकरी और समाज सेवा आदि सभी

बातें एक साथ कैसे पूरी कर सकोगे ?

भीमराव- यदि महाराजा ने मुझे उस तरह का मौका दिया, तो मैं ये सारी बातें सही ढँग से पूरी करके दिखा दूँगा।

भीमराव की योजना स्पष्ट है। वंचित समाज की दीन-हीन अवस्था को कैसे ठीक करना है, इसका रास्ता भी शिक्षा से ही पता चलेगा। एक बार रास्ता पता चल जाये, तो मंजिल फतेह करना इतना मुश्किल नहीं है। लेकिन ध्यान रखना होगा, आम्बेडकर के सूत्र में शिक्षा, एक बड़ी शृंखला का पहला हिस्सा है । एकता ओर संघर्ष उसके साथ ही जुड़ा हुआ है। बाबा साहेब जब महाराजा को पढ़ाई, नौकरी और समाज सेवा एक साथ साध लेने का संकल्प सुनाते हैं तो उनके मन में शिक्षा,एकता और संघर्ष का यह त्रिसूत्र ही दिखाई देता है।

लेकिन बाबा साहेब शिक्षा की महत्ता रेखांकित करने के साथ साथ उसको प्राप्त करने के पात्र की भी चर्चा करते हैं। वे कहते हैं,'शिक्षा दुधारी तलवार है । इसलिये उसे चलाना ख़तरे से भरा रहता है। चरित्र हीन व विनय हीन सुशिक्षित व्यक्ति पशु से भी अधिक ख़तरनाक होता है। यदि सुशिक्षित व्यक्ति की शिक्षा गरीब जनता के हित की विरोधी होगी, तो वह व्यक्ति समाज के लिये अभिशाप बन जाता है । ऐसे सुशिक्षितों को धिक्कार है। शिक्षा से चरित्र अधिक महत्त्व का है । युवकों की धर्म विरोधी प्रवृति देखकर मुझे दुख होता है। कुछ लोगों का मानना है कि धर्म अफीम की गोली है। परन्तु यह सत्य नहीं है। मेरे अन्दर जो अच्छे गुण हैं अथवा मेरी शिक्षा के कारण समाज का जो कुछ हित हुआ होगा, वे मेरे अन्तर्मन की धार्मिक भावना के कारण ही है। मुझे धर्म चाहिये। परन्तु धर्म के नाम पर चलने वाला पाखंड नहीं।' (दत्तोपन्त ठेंगडी, डा. आम्बेडकर और सामाजिक क्रान्ति की यात्रा, पृष्ठ 99) बाबा साहेब का अभिमत स्पष्ट है। शिक्षा जनहितकारी होनी चाहिये । शिक्षा से प्राप्त योग्यता का उपयोग वंचित समाज के कल्याण के लिये किया जाना चाहिये न कि उसके शोषण के लिये। शिक्षा का उद्देश्य बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय होना चाहिये न कि स्व हिताय, स्व सुखाय। यही कारण है कि आम्बेडकर शिक्षा और शील को एक दूसरे का पूरक मानते थे। शील के बिना शिक्षा का कोई अर्थ ही नहीं रह जाता। शीलवान व्यक्ति पारम्परिक अर्थ में शिक्षित न भी हो तो चल सकता है। क्योंकि शील साधना अपने आप में ही शिक्षा है । लेकिन शिक्षित व्यक्ति शीलविहीन हो इससे बड़ी त्रासदी और कोई नहीं हो सकती। आम्बेडकर कहते हैं, इसमें कोई सन्देह ही नहीं कि शिक्षा का महत्त्व है। लेकिन शिक्षा के साथ ही मनुष्य का शील भी सुधरना चाहिये। शील के बिना शिक्षा का मूल्य शून्य है। ज्ञान तलवार की धार जैसा है। तलवार का सदुपयोग अथवा दुरुपयोग उसको पकड़ने वाले पर निर्भर करता है। वह उससे किसी का खून भी कर सकता है और किसी की रक्षा भी कर सकता है। यदि पढ़ा लिखा व्यक्ति शीलवान होगा तो वह अपने ज्ञान का उपयोग लोगों के कल्याण के लिये करेगा। लेकिन यदि उसका शील अच्छा नहीं होगा तो वह अपने ज्ञान से लोगों का अकल्याण भी कर सकता है।' (दत्तोपन्त ठेंगडी, डॉ. आम्बेडकर और सामाजिक क्रान्ति की यात्रा, पृष्ठ 98) भीम राव आम्बेडकर ने स्वयं अपनी शिक्षा का उपयोग अपनी सुख सुविधा के लिये नहीं बल्कि वंचित समाज के कल्याण के लिये किया।

शिक्षा का इतना महत्त्व है तो शिक्षा देने वाले शिक्षक का महत्त्व तो उससे भी कई गुणा बढ़ जाता है । क्योंकि शिक्षा केवल किताबों से नहीं मिलती, वह शिक्षक के आचरण व व्यवहार से भी मिलती है । शिक्षा संस्कार बनाती है और संस्कार शिक्षक के आचरण से ही बनते हैं । इसलिये शिक्षा के मामले में बाबा साहेब शिक्षक की भूमिका और चयन को लेकर अत्यन्त सतर्क रहते थे। वे मानते थे कि,'शिक्षक राष्ट्र का सारथी होता है । इसलिए शिक्षक बुद्धि से होशियार, वृत्ति से निरीक्षक व मर्मज्ञ होना चाहिए क्योंकि शिक्षा के द्वारा मनुष्य का आत्मिक उन्नयन होता है और वह तभी हो सकता है जब शिक्षक योग्य होगा । (दत्तोपन्त ठेंगडी, डॉ. आम्बेडकर और सामाजिक क्रान्ति की यात्रा, पृष्ठ 98) जाहिर है शिक्षा के क्षेत्र में आम्बेडकर एक प्रकार से गुरु-शिष्य परम्परा के समर्थक हैं ।

उन्होंने 1949 में अपने एक मित्र को लिखा, 'महाविद्यालय का प्राचार्य किसे नियुक्त किया जाये, इसको लेकर चिन्ता में हूँ। मात्र वेतन के लिये काम करने वाला प्राचार्य, संस्था को अपना मानकर त्याग व आस्थापूर्वक कार्य नहीं करता। वह केवल स्वयं का विचार करता है। लेकिन मुझे तो योग्य प्राचार्य चाहिये।' (दत्तोपन्त ठेंगडी, डॉ. आम्बेडकर और सामाजिक क्रान्ति की यात्रा, पृष्ठ 99) शिक्षा और शिक्षक के मामले में बाबा साहेब जाति भेद से कहीं दूर थे। उनके अपने मिलिन्द महाविद्यालय के किसी ब्राह्मण आचार्य ने उनसे एक दफा पूछा कि आप इतने ब्राह्मण विरोधी क्यों हैं? आम्बेडकर का उत्तर मार्मिक था,'मेरे मित्र! यदि मैं ब्राह्मण विरोधी होता तो तुम इस महाविद्यालय में न होते। मेरी संस्था के शिक्षक बहुधा ब्राह्मण ही हैं। मेरा विरोध ब्राह्मण जाति से नहीं बल्कि ब्राह्मण्य से है' (दत्तोपन्त ठेंगडी, डॉ. आम्बेडकर और सामाजिक क्रान्ति की यात्रा, पृष्ठ 109)

इसमें कोई शक नहीं कि आम्बेडकर शिक्षा को वंचित समाज के कल्याण और प्रगति का धारदार और कारगार हथियार मानते थे । उन्होंने लार्ड लिनलिथगो को कहा था,'हमारे समाज के कल्याण के लिए ऐसे

लोगों की आवश्यकता है, जो शासन रूपी दुर्ग के सामरिक महत्त्व के स्थानों पर बैठकर शत्रु को पराजित कर सकें व हमारे ग़रीब लोगों की देखरेख कर सकें।' (दत्तोपन्त ठेंगडी, डॉ. आम्बेडकर और सामाजिक क्रान्ति की यात्रा, पृष्ठ 97) लेकिन शिक्षा को वे आईसोलेशन में पारिभाषित नहीं करते थे बल्कि उसके सर्वग्राही अर्थों में ही ग्रहण करते थे। हिन्दू समाज में कुछ वर्ग ऐसे हैं , जिन्हें परम्परा से शिक्षा व ज्ञान का अधिकारी माना गया है। लेकिन कुछ समुदाय ऐसे हैं जिन्हें सामाजिक संरचना ने ही शिक्षा प्राप्त करने से वंचित किया हुआ है। हिन्दू समाज को यदि पुनः शक्तिशाली बनाना है तो उसे इस वंचित समाज को प्राथमिकता के आधार पर शिक्षित करना होगा। आम्बेडकर ने कहा, 'शिक्षा का प्रबन्ध इस तरह से होना चाहिए कि साधारण जनता को शिक्षा सुलभता से प्राप्त हो। निम्न वर्ग के लोगों के लिए शिक्षा बहुत खर्चीला नहीं होनी चाहिए। दूसरी बात यह है कि निम्न वर्ग को उच्च वर्ग के स्तर तक लाने के लिए उन्हें सहूलियतें दी जानी चाहिएँ। पाँच और दस अंकों को दो से गुणा करने पर गुणन फल दस और बीस आएगा। इसलिए पाँच को दो से गुणा कर, दस को एक से ही गुणा करना चाहिए। अत निम्न वर्ग को काफ़ी सुविधाएँ देकर उन्हें उच्च वर्ग के स्तर पर लाना चाहिए। यह कहना ही समता है।' (धनंजय कीर, बाबासाहब आम्बेडकर जीवन चरित, पृष्ठ 81)

अंग्रेजों के चले जाने के बाद, भारत के लिए नई स्मृति की जरूरत थी। पुरानी स्मृतियाँ काल बाह्य हो गई थीं। भारत के नए संविधान के पुरोधा आम्बेडकर ही बने। उन्होंने दलित समाज को शिक्षा के क्षेत्र में समान अवसरों का प्रावधान तो किया ही, साथ ही दलितों को विशेष अवसर देने के भी प्रावधान किए। दलितों की शिक्षा के लिए उन्होंने पीपुल्ज एजुकेशन सोसायटी का गठन किया, जिसने महाराष्ट्र में कुछ शिक्षा संस्थान चलाए। इसे बाबा साहेब की कठिन तपस्या मानना होगा, जिसके कारण दलितों को ये विशेष अवसर मिले। महाराष्ट्र के सभी दलितों की अपेक्षा महारों में शिक्षा का प्रसार सर्वाधिक है। इसका सबसे बड़ा कारण डॉ. आम्बेडकर ही हैं। आम्बेडकर आज के युग में हिन्दू समाज के सबसे बड़े समाज सुधारक थे, जिन्होंने समाज के दलित वर्ग में एक बार फिर से शिक्षा का प्रचार प्रसार कर उसमें व्याप्त असंतुलन को समाप्त करने का प्रयास किया ताकि वह एक बार पुनः बलशाली बन सके। ❑

(कुलपति, हिमाचल केन्द्रीय
विश्वविद्यालय, धर्मशाला)

मध्यप्रदेश शिक्षक संघ
जिला शाखा, नीमच

अखण्ड मण्डलाकारम् व्याप्तम् येन चराचरम्।
तत्पदम् दर्शितम् येन तस्मै श्री गुरवे नमः ।।

गुरु पूर्णिमा के पावन अवसर पर आयोजित
'गुरु वन्दन' कार्यक्रम
की सफलता के लिए हार्दिक शुभकामनाएँ एवं बधाई।

शुभेच्छु : हिम्मत सिंह जैन, श्रीमती कुसुम शर्मा, विनोद कुमार पुनी, बद्री लाल पुरोहित, रमेश चन्द्र नागदा, विजय कुमार तिवारी, मन्ना लाल बोहरा, जिनेन्द्र कुमार जैन, श्रीमती रीटा सहारिया, बंशीलाल प्रजापत, हीरालाल मेघवाल, सुनिल शर्मा एवं समस्त पदाधिकारी जिला शाखा नीचम।

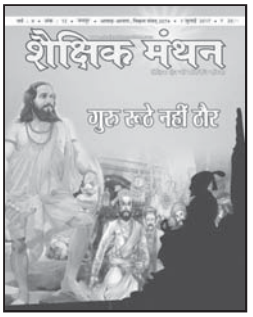

जो स्वतंत्र निर्णय लेना सिखाए वही असली शिक्षा

❑ अरुण कुमार

हमारे समाज में स्कूल क्यों हैं? इनका काम क्या है? क्या स्कूलों का उद्देश्य बच्चों को इसलिए तैयार करना है कि वे सफेदपोश नौकरी हासिल कर सकें? या हर व्यक्ति में ऐसी क्षमता विकसित करनी है कि वह स्वतंत्र निर्णय ले सके, उस निर्णय पर कारणों सहित उसका मतलब समझा सके, आँकड़ों को समझ सके उनका विश्लेषण कर सके, दूसरों के विचारों को महत्त्व दे सके, उनके तर्कों को समझ सके, उस पर अपने तर्क रख सके। आज के समय में शिक्षा और उसके उद्देश्यों को लेकर इन सवालों पर सोचे बिना आगे नहीं बढ़ा जा सकता है।

विद्या भवन ने उदयपुर जैसे छोटे शहर से शिक्षा के क्षेत्र में काम करने की यात्रा शुरू की थी। कई उतार-चढ़ाव से भरी यह यात्रा आज भी देश के विभिन्न हिस्से के स्कूलों और समुदाय के साथ जारी है। प्रत्येक स्कूल और समुदाय में बच्चों को शिक्षित करना, उनके तर्कों को सम्मान देना, उनके साथ बराबरी का व्यवहार करना तथा उनके अधिकारों को समझने का सवाल महत्त्वपूर्ण बना हुआ है। यह स्कूल के सभी अनुभवों और कार्यक्रमों में दिखाई पड़ता है। विद्या भवन स्कूल में हर साल सरकारी स्कूलों में पढ़ने वाले बच्चों के लिए ग्रीष्मकालीन कैम्प का आयोजन किया जाता है। हर साल नए बच्चे महीने भर इस कैम्प में भागीदारी करते हैं। ये बच्चे हमारी शिक्षा व्यवस्था, स्कूल, अध्यापक और समुदाय के बारे में सोचने के लिए ढेरों सवाल छोड़ जाते हैं। इस साल भी कैम्प के कुछ ऐसे ही अनुभव सामने आए।

गीत, संगीत, नृत्य और नाटक के आनंद की शोर मचाती आवाजें क्रमशः सुबकने लगीं। हर तरफ से रोने की आवाजें सुनाई देने लगीं। जिधर नजर जा रही थी शिक्षक, वॉलंटियर, लड़के, लड़कियाँ हर किसी की आँखें आँसुओं से तर थीं। ऐसा पहली बार नहीं हुआ था। पिछले कई वर्षों से विद्या भवन स्कूल में चलने वाले ग्रीष्मकालीन कैम्प का समापन समारोह ऐसा ही होता रहा है। हर साल यह कैम्प अपनी सहजता और नए-नए बच्चों की मौलिकता लिए पूरा हो जाता है। अलग-अलग हिस्सों से आए गरीबों के बच्चे तरह तरह के सवाल उठाते अपने गाँव के सरकारी स्कूलों की ओर बढ़ जाते हैं। हम यह उम्मीद रखतें हैं कि ये बच्चे अपनी पढ़ाई जारी रखेंगें और अपने शिक्षकों से सवाल पूछते रहेंगे....

इस बार के कैम्प के दौरान भी बच्चों के बहुत से सवाल आए एक सवाल था कि किसी ने बच्चों से कह दिया कि 'नाचने गाने से क्या होता हैं' उन्हें तो पढ़ाई-लिखाई पर ही ध्यान देना चाहिए।

समाज में शिक्षा की सफलता का पैमाना अस्सी प्रतिशत, नब्बे प्रतिशत और सौ प्रतिशत से आगे बढ़ता हुआ नौकरशाह, डॉक्टर, इंजीनियर और वकील के रूप स्थापित करने का बन गया है। वास्तविक पैमानों पर सोचने वाले लोग कौन होंगे। जो बच्चे बड़े होकर जूते सिलेंगे, कपड़े सिलेंगे, चपरासी बनेंगे, पौधे उगाएँगे, किसानी करेंगे, ड्राइवर होंगे, क्लर्क, मैनेजर, अधिकारी होंगे या शिक्षक होंगे क्या इन्हें योग्य और कुशल बनाए जाने की जिम्मेदारी समाज और सरकार को लेने की आवश्यकता नहीं है। औपचारिक स्कूली व्यवस्था किसी भी समाज के लिए एक अनिवार्य मजबूरी की तरह है। यह हो तो बेहतर है पर इसका कोई विकल्प नहीं हैं।

एक अर्जी दो बच्चियों की थी, जिनके घर में शादी थी। उन्होंने अपने परिवार वालों से कह दिया कि वे कैम्प छोड़कर नहीं जाएँगी लेकिन, घर वाले उन्हें जबर्दस्ती लेने रहे थे। बच्चियों ने हमसे पूछा था कि घर जाने से रोकने के लिए हम उनके लिए क्या कर सकते हैं?

इसी कैम्प में काम कर रहे एक वॉलंटियर शिक्षक आखिरी पूरी रात बच्चों अपने साथी शिक्षकों के साथ फतहसागर झील के किनारे घूमते रहे और अगले दिन जाते समय बहुत उदास थे। उनकी उदासी का कारण एक बच्चा था, जो पूरे महीने उनकी तमाम कोशिशों के बावजूद आखिरी एक हफ्ते में कुछ-कुछ बोलना शुरू कर पाया था। उस बच्चे को याद करते हुए वे कहने लगे 15 दिन कैम्प के बीत गए और यह बच्चा कुछ भी बोल नहीं रहा था। मेरी समझ में नहीं रहा था कि क्या करूँ? एक दिन कक्षा में उन्होंने उस बच्चे के कंधे पर हाथ रख दिया ऐसा करते ही वह चौंककर डर गया। बहुत पूछने पर उसने बताया कि उसे लगा था अब आप मुझे मारेंगे.... आखिरी सप्ताह तक वह बच्चा कुछ-कुछ बोलने लगा था लेकिन, कैम्प से वापस जाते हुए हमारे शिक्षक साथी को यही लग रहा था कि उस बच्चे के साथ उनका काम अभी पूरा नहीं हुआ है...

विद्या भवन सोसायटी के जरिये शिक्षा में काम करते हुए आठ दशक से ऊपर हो गए हैं पर आज भी हमारे लिए यह सवाल कायम है कि 'हमारा काम अभी पूरा नहीं हुआ।' विद्या भवन स्कूल में ऐसे भी बच्चे आते जिन्हें अपने स्कूलों ने यह मानकर छोड़ दिया कि वे सीख ही नहीं सकते। अलग-अलग विषय को लेकर भी ऐसे बच्चों के बारे उनके स्कूलों और समुदाय के फीड बैक थे। कोई गणित नहीं सीख सकता था तो कोई अंग्रेजी तो कोई पढ़ना नहीं सीख सकता था। इनका परिवेश, इनकी बुद्धि इस लायक नहीं है कि वे पढ़ाई कर पाए और

उतीर्ण होकर अगली कक्षा में जा पाएँ। ऐसे आदिवासी गरीबों के परिवार से पिछले साल आठवीं में तीस बच्चों का नामांकन हुआ था। विद्या भवन में पढ़ते और रहते हुए इन सभी बच्चों ने सिर्फ पढ़ना बल्कि गणित अंग्रेजी भी सीखे और आठवीं कक्षा भी उत्तीर्ण की। विद्या भवन के लोगों ने थोड़ा लगाव, बराबरी और बच्चों में सीखने की समझ के साथ काम किया, जिसका परिणाम था कि ये बच्चे स्कूल में बने हुए हैं। छात्रावास में रहते हुए ये बच्चे विभिन्न प्रकार के आयोजनों और कार्यक्रमों में खुलकर भागीदारी कर रहे हैं और अपने सवाल पूछ रहे हैं।

समाज में शिक्षा की सफलता का पैमाना अस्सी प्रतिशत, नब्बे प्रतिशत और सौ प्रतिशत से आगे बढ़ता हुआ नौकरशाह, डॉक्टर, इंजीनियर और वकील के रूप स्थापित करने का बन गया है। वास्तविक पैमानों पर सोचने वाले लोग कौन होंगे। जो बच्चे बड़े होकर जूते सिलेंगे, कपड़े सिलेंगे, चपरासी बनेंगे, पौधे उगाएँगे, किसानी करेंगे, ड्राइवर होंगे, क्लर्क, मैनेजर, अधिकारी होंगे या शिक्षक होंगे क्या इन्हें योग्य और कुशल बनाए जाने की जिम्मेदारी समाज और सरकार को लेने की आवश्यकता नहीं है। औपचारिक स्कूली व्यवस्था किसी भी समाज के लिए एक अनिवार्य मजबूरी की तरह है। यह हो तो बेहतर है पर इसका कोई विकल्प नहीं हैं। मनुष्य का मस्तिष्क वास्तविक दुनिया के संदर्भों से सीखने के अनुकूल होता है लेकिन, स्कूल अमूर्त से या पाठ्यपुस्तकों के जरिये सिखाने की प्रक्रिया से शुरू होते हैं। बच्चों स्कूल को लेकर, उनके सीखने को लेकर हमारे समाज की शैक्षिक चेतना बेहद चिंतनीय हैं। समाज में कई प्रकार की मान्यताएँ और विश्वास लोगों के दिल दिमाग में बैठे हुए हैं, जो बचपन और सीखने को लगातार नुकसान पहुँचाने के अतिरिक्त कुछ नहीं कर सकते। सफलता के जिन पैमानों पर जोर दिया जा रहा है उसे बदलने की आवश्यकता है।

(प्रोग्राम कोऑर्डिनेटर, विद्या भवन सोसायटी)

सरकारी अकादमियों की दुर्गति

❑ शंकर शरण

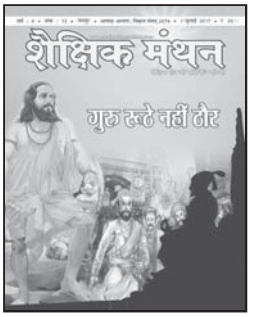

यह तो बहुत लोग बोलते हैं कि अधिकांश सरकारी स्कूलों में पढ़ाई कमजोर हैं, लेकिन उसे सुधारने के नाम पर कारगर उपाय नहीं होते। सही मूल्यांकन या आलोचनाएँ नहीं आती हैं, क्योंकि अधिकांश दल और संबंधित बुद्धिजीवी दलगत भावना से ग्रस्त होते हैं। जिन्हें किसी तरह सत्ता में आने और संस्थाओं पर काबिज होने के सिवा कोई बुनियादी दिलचस्पी नहीं रहती। इसलिए उद्देश्य-गत विफलताओं की कभी चर्चा ही नहीं होती, मानो उसमें सब कुछ ठीक है। इसी कारण बिल्कुल हानिकारक बातें भी शिक्षा के उद्देश्य और पाठ के रूप में दशकों चलती रहती हैं। इस प्रकार विराट पैमाने पर एक नकली गतिविधि ही सरकारी क्षेत्र में शिक्षा, उच्च-शिक्षा और शोध का मुख्य अंग बन गई है।

खबर है कि कई सरकारी अकादमिक संस्थाओं, परिषदों का पुनर्गठन करने पर विचार हो रहा है। इसमें एक जैसी अनेक संस्थाओं का एकीकरण अथवा उन्हें किसी अन्य संस्था के अधीन करने जैसे प्रस्ताव हैं। इसका उद्देश्य यदि केवल संस्थाओं की संख्या कम करना या कुछ खर्च बचाना भर हो तो यह काफी नहीं है। वस्तुत: सरकार को कई अनावश्यक क्षेत्रों से मुक्त कर देने पर भी विचार होना चाहिए। इसमें विविध उन्नत देशों के उदाहरणों से भी तुलना करनी चाहिए। हानि-लाभ का विचार भी महज आर्थिक नहीं, बल्कि कार्यगत, लक्ष्यगत तथ्यों को सामने रखकर करना चाहिए। वैसे भी चिंतन-मनन और शिक्षा-संस्कृति विशुद्ध रूप से समाज का क्षेत्र है, सरकार का नहीं। यही आज अधिकांश पश्चिमी लोकतंत्रों में भी है। सब कुछ सरकार करेगी, यह सिद्धांत केवल कम्युनिस्ट, समाजवादी देशों में था। उसी परिपाटी को स्वतंत्र भारत में अपनाया गया, क्योंकि तब समाजवाद के प्रति एक भारी व्यामोह था। इस परंपरा ने हमारी शिक्षा विशेषकर सामाजिक, मानविकी विषयों की शिक्षा, चिंतन और शोध को गर्त में ले जाने में जबर्दस्त भूमिका निभाई। सोवियत मॉडल पर देश भर में असंख्य सामाजिक शोध संस्थान और योजनाएँ बनाई गईं जो जल्द ही पार्टीबंदी, परिष्कृत नारेबाजी और राजनीतिक विचारधाराओं के प्रचार का साधन बन कर रह गईं। सभी पार्टियों ने वही मॉडल अपना लिया, क्योंकि पार्टी हित और निजी हित साधन के लिए सरकारी संस्थाएँ दुधारु गाय बनाई जा चुकी थीं। जैसे आर्थिक क्षेत्र में विनिवेशीकरण हुआ उसी तरह शिक्षा क्षेत्र में सरकार और राजनीतिक दलों को धीरे-धीरे बाहर किए बिना हमारी सद्‌गति नहीं दिखती। शिक्षा नीति से लेकर विविध सामाजिक, भाषा-साहित्य विषयों की शिक्षा, पाठ्य पुस्तकें, प्रकाशन, शोध-दिशा, विचार-विमर्श, सेमिनार आदि सब जगह पार्टी-लफ्फाजी खत्म कर गुणवत्ता की पुनर्स्थापना इस मूल बिंदु से जुड़ी है।

कई मामलों में स्थिति इतनी बिगड़ चुकी है कि स्वयं सरकारी कर्णधार बेबस नजर आते हैं। उनके अधीन हजारों अमले हैं, सैंकड़ों संस्थान हैं जिन्हें वे सालाना अरबों रुपये आवंटित करते हैं, मगर उसकी उपलब्धि क्या है, यह देखने-जाँचने का अब उनमें हौसला नहीं रह गया है। विवशता में सभी मानो सामूहिक रूप से एक नाटक कर रहे

हैं। ऊपर से लेकर नीचे तक कथित रूप से काम तय करने वालों से लेकर उसे पूरा करने वाले, उसकी देखरेख, मूल्यांकन करने वाले, शाबाशी देने और पीठ थपथपाने वाले लगभग सभी रटी-रटाई बातें बोलते हैं। चूंकि संसद, विधानसभाओं में नेतागण वैसे भी अधिकांश इन विषयों में योग्यता नहीं रखते, इसलिए वहाँ भी इसे रोकने वाला कोई नहीं। यह तो बहुत लोग बोलते हैं कि अधिकांश सरकारी स्कूलों में पढ़ाई कमजोर हैं, लेकिन उसे सुधारने के नाम पर कारगर उपाय नहीं होते।

सही मूल्यांकन या आलोचनाएँ नहीं आती हैं, क्योंकि अधिकांश दल और संबंधित बुद्धिजीवी दलगत भावना से ग्रस्त होते हैं। जिन्हें किसी तरह सत्ता में आने और संस्थाओं पर काबिज होने के सिवा कोई बुनियादी दिलचस्पी नहीं रहती। इसलिए उद्देश्य-गत विफलताओं की कभी चर्चा ही नहीं होती, मानो उसमें सब कुछ ठीक है। इसी कारण बिल्कुल हानिकारक बातें भी शिक्षा के उद्देश्य और पाठ के रूप में दशकों चलती रहती हैं। इस प्रकार विराट पैमाने पर एक नकली गतिविधि ही सरकारी क्षेत्र में शिक्षा, उच्च-शिक्षा और शोध का मुख्य अंग बन गई है। सभी सरकारी अकादमियों, संस्थानों में केवल पैसा खर्च करना ही आदि और अंत रह गया है। पैसा खर्च, यानी काम हुआ। इस नकली पैमाने से उपलब्धियाँ प्रचारित करने में भी उदारतापूर्वक पैसा खर्च किया जाता है। इसलिए जोर-जोर से यह भी कहना-सुनना चलता रहता है कि उपलब्धियाँ बढ़ रही हैं। इतने शोध हुए, इतने पर्चे पढ़े गए और प्रकाशित हुए आदि। उनमें क्या है, कुछ है भी या नहीं यह देखा नहीं जाता। यह हू-ब-हू समाजवादी मॉडल की आत्मप्रवंचना है। इसे सरलता से परखा जा सकता है, पर दुर्भाग्य से कई क्षेत्रों में यहाँ प्रतिभाओं का अकाल भी पड़ चुका है। सब जगह रेडीमेड मिल गई जैसी-तैसी रिपोर्टों और उनसे जुड़ी सामग्री का विचारहीन रवैया प्रचलित है। सरकारी अकादमियों की आलोचना या प्रशंसा भी इसी ढ़र्रेबाजी और अकर्मण्यता की शिकार है। तब कोई सुधार हो तो कैसे? सम्पूर्ण स्थिति का वास्तविक मूल्यांकन हो तो दिखेगा कि कई क्षेत्रों में भारी-भरकम सरकारी संस्थाएँ उस क्षेत्र का काम करने से अधिक उसके सहज विकास में बाधक बनी हुई हैं। निहित स्वार्थों, अकर्मण्य तत्वों और निर्विकार नौकरशाही का जमावड़ा ही अधिकांश संस्थाओं की पहचान है, बल्कि इसी रूप में उसका आकर्षण भी है कि बिना खास जिम्मेदारी उठाए विविध प्रकार की सुख-सुविधाएँ उठाई जा सकती हैं।

कम से कम सामाजिक, मानविकी एवं भाषा की उच्च शिक्षा और सांस्कृतिक गतिविधियों के संपूर्ण क्षेत्र से सरकार का बाहर हो जाना ही अच्छा है। यह संपूर्ण क्षेत्र समाज की अपनी रचनात्मकता एवं चिंता का है जिसे समाज को ही उठाना होगा। अन्यथा यह सदैव राजनीतिग्रस्त, गुणवत्ताहीन और इस प्रकार निर्रथक बना रहेगा। केवल उन पर ध्यान देने और विचार करने की जरूरत है। दरअसल जिन कारणों से एयर इंडिया भारी घाटे में चलती है और उसे सुधारने के लिए अरबों का अतिरिक्त पैकेज भी निष्फल होता है उन्हीं कारणों से सामाजिक, मानविकी, भाषा, साहित्य संबंधी शिक्षा, उच्च शिक्षा और शोध संस्थान, समितियाँ, परिषदें आदि उससे भी बुरी हालत में हैं। यह किसी से छिपा नहीं कि स्वार्थी और गुटबाज लोग संस्थाओं, गतिविधियों में एकत्र हो जाते हैं या योग्य लोग भी विविध कारणों से निष्क्रिय हो जाते हैं। वे अपने ऊपर के अधिकारी या मंत्री को संतुष्ट रखने के सिवा प्राय किसी जिम्मेदारी से निर्लिप्त रहते हैं। ध्यान दिलाने पर भी मामूली से उचित काम भी नहीं करते-इस भाव से कि उसकी जरूरत ही क्या है। फिर वोट-बैंक और निजी प्रभाव बनाने के चक्कर में नेता लोग सैदव ऐसी संस्थाओं, गतिविधियों का आकार एवं संख्या बढ़ाते रहते हैं ताकि उनके अपने लोग फिट होते रहें और काम आते रहें। नेताओं को रंच मात्र भी इसकी परवाह नहीं कि उन संस्थाओं में खपने वाले धन की उपादेयता क्या है? ❑

(स्वतंत्र स्तम्भकार)

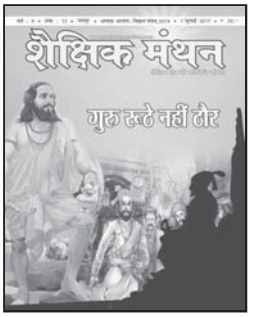

इक्कीसवीं सदी के इन दिनों में जब दुनिया विज्ञान प्रौद्योगिकी और विकास की ओर छलाँग लगा रही है, तब हम देश में जातीयता या भिन्न समुदायों की सामाजिक पहचान को पुख्ता करने में लगे हुए हैं। इसके कई उदाहरण अब भी गुलाम जातिवाद से अटी मनोवैज्ञानिक और रूढ़िवादी सोच को परिलक्षित करते हैं। उदाहरण के तौर पर देश के प्रतिष्ठित जननेता और भारतीय संविधान के निर्माता डॉ. भीमराव आंबेडकर को अब भी उनकी जाति के साथ जोड़ कर देखा जाता है। इसी तरह पूर्व राष्ट्रपति के आर नारायणन और डॉ. अब्दुल कलाम का नाम पहले दलित राष्ट्रपति और मुस्लिम राष्ट्रपति की छवि के साथ जोड़ दिया जाता है। इसे किस तरह देखा जाए! जातीयता और जातिगत समीकरणों में बँटा हुआ समाज अपने प्रतिभावान होनहार बच्चों को उनके जातिगत उपनामों के बंधन में बाँध देता है। सवाल है कि क्या हम बदलते भारत की ऐसी तस्वीर को भी देखना चाहेंगे?

प्रतिभा का दायरा

❑ कृष्ण कुमार रत्तू

परीक्षाओं में बाजी मार ले जाने के मामले में अब हमारी लड़कियाँ आगे हैं। उनके किसी परीक्षा में पास करने का प्रतिशत और अंकों का प्रतिशत- दोनों ही लड़कों से आगे है।

हाल ही में परीक्षाओं के परिणाम की खबरों ने मुझे इस बात पर ज्यादा चौंकाया कि अब समाज के उस तबके के प्रतिभावान बच्चे परीक्षाओं में अव्वल आने लगे हैं, जो कभी हाशिये पर रहे। हालांकि अब भी देश के गाँवों में स्थिति अच्छी नहीं है, लेकिन जिस तरह से निम्न या निम्न मध्यवर्गीय समाज से छोटे गाँव और कस्बों के साधारण घरों से निकल कर बच्चे अपनी प्रतिभा का परचम लहरा कर जलवा बिखेर रहे हैं, वह कई लिहाज से गौर करने वाली बात है। टीवी के रियलिटी शो में रोज नई प्रतिभाओं का सामने आना भी इसका उदाहरण है। असल में बदलाव के नारे के बरक्स यह बदलाव की नई इबारत के साथ नई पीढ़ी के युवाओं की नई तस्वीर है। यहाँ प्रतिभा पर किसी का एकाधिकार नहीं है। जिसके पास है, वह श्रेष्ठ है। इसके साथ अब यह भी कह सकते हैं कि जिसे अवसर मिल सका, वही अपनी प्रतिभा का लोहा मनवा सकता है।

परीक्षाओं में बाजी मार ले जाने के मामले में अब हमारी लड़कियाँ आगे हैं। उनके किसी परीक्षा में पास करने का प्रतिशत और अंकों का प्रतिशत- दोनों ही लड़कों से आगे है। यह सब ऐसे समय में हो रहा है, जब देश में लड़कियों को लेकर डर का प्रश्न छोटे शहरों से लेकर महानगरों तक में आम बात है। इन दिनों यह बहुत अजीब स्थिति है कि जैसे-जैसे मनुष्य और समाज आगे बढ़ने की प्रतिस्पर्धा में हैं तो इसमें प्रतिभा के कितने उपनाम हो सकते हैं। यह अपने आप में दिलचस्प बात है, क्योंकि उपनाम और नाम की महिमा से हमारे तमाम सूचना माध्यम अटे रहते हैं। अपनी प्रतिभा के बूते पहले और दूसरे दर्जे पर आने वाले बच्चों के बारे में जो सूचनाएँ और विवरण समाचार पत्रों में छपते हैं, वे और भी चौंकाने वाले होते हैं। मिसाल के तौर पर राज्य भर में पहले नंबर पर आने वाली लड़की के बारे में जब बताया जाता है तो उसकी प्रतिभा और मेहनत पीछे छूट जाती है, उसका टॉप करना ही केंद्र में आ जाता है। 'सब्जी बेचने वाले की लड़की ने पाया पहला स्थान' या 'चाय का ठेला चलाने वाले का बेटा आया अव्वल' कहते हुए दरअसल परीक्षार्थी की सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि को प्रमुख बना दिया जाता है और उसकी मेहनत कहीं पीछे छूट जाती है। जबकि ज्यादा अहम यह है कि अभाव के हालात के बीच किसी बच्चे ने कितनी मेहनत की! यह ठीक उसी तरह की मानसिकता है, जिसमें व्यक्ति की उपलब्धि उसकी सामाजिक पृष्ठभूमि के नाम से जानी जाती है या फिर किसी नए के प्रवेश के साथ ही उसका 'उपनाम' जोड़ दिया जाता है।

इक्कीसवीं सदी के इन दिनों में जब दुनिया विज्ञान प्रौद्योगिकी और विकास की ओर छलाँग लगा रही है, तब हम देश में जातीयता या भिन्न समुदायों

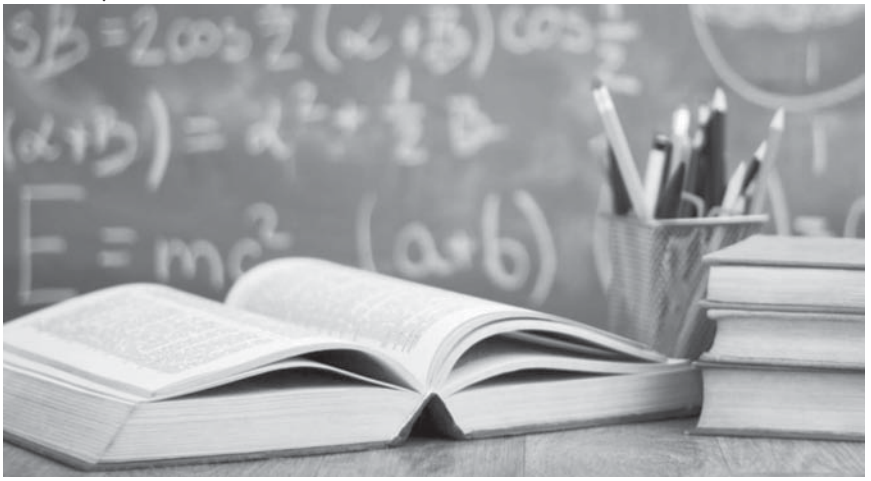

की सामाजिक पहचान को पुख्ता करने में लगे हुए हैं। इसके कई उदाहरण अब भी गुलाम जातिवाद से अटी मनोवैज्ञानिक और रूढ़िवादी सोच को परिलक्षित करते हैं। उदाहरण के तौर पर देश के प्रतिष्ठित जननेता और भारतीय संविधान के निर्माता डॉ. भीमराव आंबेडकर को अब भी उनकी जाति के साथ जोड़ कर देखा जाता है। इसी तरह पूर्व राष्ट्रपति के आर नारायणन और डॉ. अब्दुल कलाम का नाम पहले दलित राष्ट्रपति और मुस्लिम राष्ट्रपति की छवि के साथ जोड़ दिया जाता है। इसे किस तरह देखा जाए! जातीयता और जातिगत समीकरणों में बँटा हुआ समाज अपने प्रतिभावान होनहार बच्चों को उनके जातिगत उपनामों के बंधन में बाँध देता है। सवाल है कि क्या हम बदलते भारत की ऐसी तस्वीर को भी देखना चाहेंगे? जबकि अब यह बहुत साफ हो चुका है कि प्रतिभा किसी खास समुदाय की कैद में नहीं होती है। वह कभी किसी जाति या धर्म के साथ बँधी हुई नहीं है। प्रतिभा का एक ही मतलब है इस दुनिया के लिए एक बेहतर इंसान होना।

हमें यह भी मालूम होना चाहिए कि जिन लोगों को हमारा समाज अब तक जातिसूचक उपनामों से तिरस्कार करता हुआ हाशिये पर धकेलता आया है, आज वह बहुजन समाज कहीं न कहीं लंबी और ऊँची उड़ान के साथ पूरे देश में हमारे सामने है। पिछले कुछ वर्षों से देश की सिविल सर्विसेज में जिस तरह से निम्न मध्यवर्गीय समाज के बच्चों ने अपनी उपस्थिति धमाके के साथ दर्ज कराई है, वह अब तक जातिगत आधार पर बनी श्रेष्ठता की धारणा को खंडित करता है।

इन दिनों अब दीवार पर लिखा हुआ पढ़ने और सोचने की आवश्यकता है। आज सत्ता के तंत्र में किसी भी अहम पद पर पहुँचने वाला व्यक्ति किसी बेहद कमजोर पृष्ठभूमि का भी हो सकता है। इसलिए अब भी समय है कि हम जाति के दायरे में बँधी सोच से बाहर आकर अपने प्रतिभावान बच्चों को एक नए समाज की संरचना के साथ दुनिया के साथ चलने के लिए एक नया जज्बा, उत्साह और नई ऊर्जा दे सकें। बदलते समाज और नई दुनिया में यही सबसे बड़ी प्रतिभा होगी।❑

राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ खेड़ा, जिला

अरूण कुमार डाहयालाल जोशी
प्रमुख, रा.शै. महासंघ, खेड़ा जिला
मो. 9879261520
राजेन्द्र सिंह रतन सिंह
मंत्री रा.शै. महासंघ, खेड़ा जिला
मो. 9687098733
जयंति भाई देवाभाई वणकर
संगठन मंत्री, रा.शै. महासंघ, खेड़ा जिला
मो. 9719018226
मयूरिकाबेन भूणचंदभाई राजपूत
महिला संयोजक, रा.शै. महासंघ, खेड़ा जिला
मो. 8397665166
निकेषभाई शान्तिलाल सेवक
उपाध्यक्ष प्राथमिक विभाग
रा.शै. महासंघ, खेडा जिला
मो. 9825186662

राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ पंचमराल

शरद कुमार म. पंडया
मध्य संभाग प्रमुख पंचमराल, गुजरात प्रांत
मो. 9925783019
विजय कुमार पटेल
अध्यक्ष पंचमराल
मो. 7575809488
चेतन कुमार वालद
महामंत्री पंचमराल
मो. 7698208731
हर्ष कुमार पटेल
कोषाध्यक्ष – मो. 7575809394
प्रवीण सिंह परमार
संगठन मंत्री – मो. 9427399752

वस्तु, सेवा कर और शिक्षा

❑ दीप्ति चतुर्वेदी

यह कहा जा सकता है कि वस्तु व सेवाकर को लेकर भारत के शिक्षा जगत में मिश्रित प्रतिक्रिया है। मान्यता प्राप्त शिक्षा संस्थान प्रत्यक्षत: अप्रभावित है तो गैर परम्परागत शिक्षण स्थान कुछ विचलित हैं। इन संस्थानों की चिन्ता का प्रभाव भारत के युवाओं पर हो सकता है। बेरोजगारी के युग में नौकरी पाने के लिए युवकों को प्रतियोगी परीक्षा की तैयारी हेतु कोचिंग संस्थाओं का सहारा लेना पड़ता है। इनकी फीस बढ़ने से युवाओं पर कंगाली में आटा गीला वाली कहावत लागू हो सकती है। आशा है सरकार इस दृष्टि से सचेत रहेगी।

शिक्षा का यह सत्र एक नई सुबह के साथ प्रारम्भ हुआ है। 2017 की एक जुलाई का प्रारम्भ भारतीय संसद के इतिहास में अलग से अंकित हुआ है। मध्यरात्रि सत्र में पहली जुलाई के प्रथम क्षण में घन्टी बजाकर भारत के राष्ट्रपति ने देश में कर की एक नई प्रणाली प्रारम्भ की है। इस नई प्रणाली को वस्तु एवं सेवा कर कहा गया है। संसद में विशिष्ट आयोजन करने का कारण देश की आर्थिक आजादी का बड़ा महत्त्वपूर्ण कदम है। एक देश, एक कर प्रणाली के लागू होने से एकता को बल मिलेगा। किसी भी देश की अर्थ व्यवस्था जनता से एकत्रित कर से ही चलती है। कर प्रणाली जितनी सरल व पारदर्शी होती है तो जनता उतने ही उत्साह से कर चुकाती है। सही राजस्व सरलता से तथा पर्याप्त मात्रा में एकत्रित होता है तो भ्रष्टाचार पर अंकुश लगता है। देश का विकास तेजी से होता है। जनता प्रसन्न रहती है। जनता की प्रसन्नता ही प्रजातन्त्र की सफलता की निशानी होती है।

प्रजातन्त्र की सफलता में सही शिक्षा महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। भारत के लिए शिक्षा औरों से अधिक महत्त्वपूर्ण है क्योंकि भारत युवाओं का देश है। अच्छी शिक्षा ही युवक को सुसभ्य व उत्पादक नागरिक बना सकती है। शिक्षा पर किया गया खर्च कभी व्यर्थ नहीं जाता अपितु कई गुणा होकर लौटता है इसी कारण स्कूली शिक्षा को वस्तु एवं सेवा कर से पूर्णत: मुक्त रखा गया है फिर भी यह कर प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष रूप से शिक्षा को प्रभावित करेगा।

भारत एक विशाल एवं विविधता भरा देश है। भारत का शिक्षा व प्रशिक्षण क्षेत्र भी बहुत विशाल व विविधताओं से भरा है। देश में लगभग 14 करोड़ स्कूल व 36,000 उच्च शिक्षण संस्थान हैं जिनमें 23 करोड़ के लगभग विद्यार्थी शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं। भारत, विश्व के विशालतम शिक्षा तन्त्रों में से एक है। संचार सुविधाओं में तेजी से हो रहे प्रसार के कारण भारत ई-शिक्षा का, अमेरिका के बाद, दूसरा बड़ा क्षेत्र बन गया है। अभी भी विस्तार की बहुत संभावनाएँ हैं। इस विशालता के कारण भारतीय शिक्षा वस्तु एवं सेवा कर के प्रभावों से अछूता नहीं रह सकता। अभी एकदम सही स्थिति का अनुमान करना तो कठिन है फिर भी मोटे तौर पर यह अनुमान लगाया जा

सकता है कि वस्तु एवं सेवा कर भारत में शिक्षा को किस तरह प्रभावित करेगा।

वस्तु एवं सेवा कर से छूट उन्ही शिक्षा संस्थानों को मिलेगी जो विधि द्वारा मान्य किसी पाठ्यचर्या का अध्ययन करवाते हो। इसमें पूर्व प्राथमिक से लेकर उच्च शिक्षा देने वाले संस्थान सम्मिलित हैं। विद्यार्थियों या उनके शिक्षकों को सरकार द्वारा मान्य व्यावसायिक प्रशिक्षण देने वाले संस्थान भी शिक्षा संबंधी सेवा कर में दी जाने वाली छूट के हकदार हैं। कोंचिग देने वाले शिक्षा संस्थानों को कर में छूट नहीं दी गई है। सरकार के निर्देशानुसार सेवा देने पर गैर सरकारी संस्थान भी कर की सीमा से बाहर रहेंगे। जैसे भारतीय प्रबंधन संस्थान द्वारा केन्द्र सरकार के निर्देश पर चलाए जा रहे प्रबधंन के विभिन्न अधिस्नातक पाठ्यक्रम कर से बाहर हैं। राष्ट्रीय कौशल विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत चलाए जा रहे विभिन्न पाठ्यक्रम भी छूट के हकदार हैं। संक्षेप में इसे यूँ भी कहा जा सकता है कि जिन शिक्षा संस्थानों को सेवाकर से छूट मिल रखी है उन्हें वस्तु व सेवाकर से भी छूट दी गई है। इन शिक्षा संस्थानों को दी जाने वाली परिवहन, भोजन, सुरक्षा, सफाई आदि की सेवाओं पर कर से छूट होगी। किसी दानदाता द्वारा भोजन, पोशाक, लेखन सामग्री, वाद्ययन्त्र आदि गैर शैक्षिक साधनों की मदद की जाती है तो वह छूट के दायरे में नहीं होगी।

छूट के दायरे से बाहर रहे शिक्षा या शिक्षा सेवा देने वाले संस्थानों को अभी 15 प्रतिशत की दर से सेवाकर देना होता है। अब 18 प्रतिशत की दर से वस्तु व सेवा कर देना होगा। स्पष्ट है कि 3 प्रतिशत की बढ़ोतरी हो गई है। पंजियन विधि में भी बदलाव हुआ है। कोई संस्थान एक या अनेक प्रदेशों में सेवा देता है तो अब तक उसे केन्द्रीकृत पंजियन सुविधा उपलब्ध थी। वस्तु व सेवा कर नियमों में ऐसी छूट नहीं होगी। राज्यवार पंजियन करना अनिवार्य होगा। उदाहरण के लिए ABC स्मार्ट कक्षाएँ दिल्ली में मुख्यालय रखते हुए 20 विभिन्न प्रदेशों में कक्षाएँ चला रही है तो उसे अब उन सभी राज्यों में पंजियन कराना होगा। कर के रिटर्न भरने की विधि में भी परिवर्तन किया गया है। संस्थाओं को पूर्व की तुलना में अधिक सूचनाएँ देनी होगी। इससे उनका कार्यभार बढ़ जाएगा मगर वित्तमंत्री अरुण जेटली का कहना है कि प्रारम्भ में कुछ परेशानी हो सकती है। कम्प्यूटर उत्पादित व्यवस्था होने के कारण कुछ अधिक नहीं करना होगा। सरकार ने प्रारम्भ समय सीमा में छूट देकर राहत प्रदान की है।

अब तक सामने आई जानकारी के अनुसार गैर सरकारी उच्च शिक्षा संस्थान वस्तु व सेवा कर लागू होने से कुछ असहज अनुभव कर रहे हैं। उनका कहना है कि देश में गैर सरकारी शिक्षा संस्थानों की संख्या तेजी से बढ़ रही है। सरकार एक ओर इनसे गैर लाभकारी संस्था के रूप में कार्य करने की अपेक्षा करती है दूसरी ओर कर में छूट भी नहीं दी है। उच्च शिक्षा संस्थान इस बात से परेशान हैं कि बाहर ली गई सेवाओं पर छूट केवल पूर्व प्राथमिक से उच्च माध्यमिक शिक्षा संस्थाओं को दी ही गई है। अत: परिवहन, भोजन, हाउसकीपिंग, प्रवेश, परीक्षा संचालन, मूल्यांकन आदि पर उच्च शिक्षा संस्थानों को कर देना होगा। इनका मानना है कि इस भेदभाव से शिक्षा को वस्तु व सेवा कर से मुक्त रखने का कोई अर्थ नहीं निकलता।

विशेषज्ञों का मानना है कि इससे विदेश से भारत पढ़ने आने वाले विद्यार्थियों की संख्या पर विपरीत प्रभाव पड़ेगा। पिछले आँकड़े बताते हैं कि 165 देशों के 45 हजार से अधिक विद्यार्थी भारत में पढ़ने हेतु पंजीकृत हुए थे। इनमें से अधिकाँश पड़ौसी देशों के थे। भारत से बाहर पढ़ने जाने वाले 3.6 लाख विद्यार्थियों की संख्या की तुलना में यह संख्या अधिक महत्त्वपूर्ण नहीं है फिर भी भारत आने वालों की संख्या में बढ़ोतरी एक अच्छा संकेत है। शिक्षा की कीमत कम रख कर इसे और बढ़ाया जा सकता है। विदेशी संस्थाओं के साथ मिल कर देश में अच्छे शिक्षा संस्थान खोलने की मुहिम चल रही है। यदि उच्च शिक्षा पर कर कम लगे तो शिक्षा संस्थान अधिक उन्नत हो सकते हैं। जब देश में अच्छी शिक्षा व्यवस्था होगी तो पढ़ने के लिए भारत से बाहर जाने वाले विद्यार्थियों की संख्या में कमी आ सकती है। देश को एक बड़ा अप्रत्यक्ष लाभ मिल सकता है।

यह कहा जा सकता है कि वस्तु व सेवाकर को लेकर भारत के शिक्षा जगत में मिश्रित प्रतिक्रिया है। मान्यता प्राप्त शिक्षा संस्थान प्रत्यक्षत: अप्रभावित है तो गैर परम्परागत शिक्षण स्थान कुछ विचलित हैं। इन संस्थानों की चिन्ता का प्रभाव भारत के युवाओं पर हो सकता है। बेरोजगारी के युग में नौकरी पाने के लिए युवकों को प्रतियोगी परीक्षा की तैयारी हेतु कोचिंग संस्थाओं का सहारा लेना पड़ता है। इनकी फीस बढ़ने से युवाओं पर कंगाली में आटा गीला वाली कहावत लागू हो सकती है। आशा है सरकार इस दृष्टि से सचेत रहेगी। ❑

(सहायक प्रोफेसर, श्री बागंड राजकीय महाविद्यालय, पाली, राजस्थान)

जन्मदिन विशेष

राष्ट्रीय शिक्षा के प्रणेता-गुरुदास बंद्योपाध्याय

❑ विष्णुप्रसाद चतुर्वेदी

भारत अपनी शिक्षा व्यवस्था को सुधार कर उसे राष्ट्रीय गौरव के अनुरूप बनाने के प्रयास में लगा है। स्वतन्त्र व तेजी से विकसित होते राष्ट्र होने के नाते ऐसे प्रयास होना कोई बड़ी बात नहीं है। बड़ी बात तो वे प्रयास हैं जो शिक्षा को गुलामी के मकड़जाल से मुक्त कराने हेतु मैकाले के सामने किए गए थे। शिक्षा को राष्ट्रीय स्वरूप देने के प्रयासों की चर्चा करते हुए जो नाम सबसे पहले उभर कर आता है वह नाम गुरुदास बनर्जी (बंद्योपाध्याय) है। सच तो यह है कि भारत में राष्ट्रीय शिक्षा का इतिहास गुरुदास बनर्जी के जीवन के साथ ही का प्रारम्भ होता है। गुरुदास बनर्जी को किसी भी विश्वविद्यालय के प्रथम भारतीय उपकुलपति के रूप में भी जाना जाता है।

ओरियन्टल सेमीनरी, देश का पहला राष्ट्रीय स्कूल जहाँ गुरुदास बंद्योपाध्याय व रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने शिक्षा प्राप्त की।

भारत अपनी शिक्षा व्यवस्था को सुधार कर उसे राष्ट्रीय गौरव के अनुरूप बनाने के प्रयास में लगा है। स्वतन्त्र व तेजी से विकसित होते राष्ट्र होने के नाते ऐसे प्रयास होना कोई बड़ी बात नहीं है। बड़ी बात तो वे प्रयास हैं जो शिक्षा को गुलामी के मकड़जाल से मुक्त कराने हेतु मैकाले के सामने किए गए थे। शिक्षा को राष्ट्रीय स्वरूप देने के प्रयासों की चर्चा करते हुए जो नाम सबसे पहले उभर कर आता है वह नाम गुरुदास बनर्जी (बंद्योपाध्याय) है। सच तो यह है कि भारत में राष्ट्रीय शिक्षा का इतिहास गुरुदास बनर्जी के जीवन के साथ ही का प्रारम्भ होता है। गुरुदास बनर्जी को किसी भी विश्वविद्यालय के प्रथम भारतीय उपकुलपति के रूप में भी जाना जाता है।

जन्म व शिक्षा

26 जुलाई 1844 को जन्में गुरुदास बनर्जी की प्रारम्भिक शिक्षा ओरियन्टल सेमीनरी विद्यालय में हुई थी। ओरियन्टल सेमीनरी की स्थापना 1829 में शिक्षाशास्त्री गौर मोहन एडी ने की थी। यह कलकत्ता में सर्वप्रथम खोले गए निजी विद्यालयों में से एक था। इसे हिन्दू बच्चों को आधुनिक शिक्षा देने के लिए खोला गया था। इससे पूर्व आधुनिक शिक्षा पाने के लिए बच्चों को मिशनरी स्कूल में पढ़ने जाना होता था। मिशनरी स्कूल में शिक्षा के साथ ईसाई धर्म का प्रशिक्षण अनिवार्य था। यह वह समय था जब संस्कृत व फारसी माध्यम से शिक्षा देने वाले स्कूल एक एक करके बंद होने लगे थे। ईसाई धर्म के प्रशिक्षण के बिना अंग्रेजी शिक्षा प्रारम्भ करने का श्रेय गौर मोहन एडी को दिया जा सकता है। ओरियन्टल सेमीनरी बाद में यह स्कूल हिन्दू कॉलेज कहलाने लगा। हिन्दू कॉलेज का संचालन अंग्रेज सरकार द्वारा निर्धारित निर्देशों से होता था। हिन्दू कॉलेज भारत ही नहीं, सम्पूर्ण एशिया का, पहला राष्ट्रवादी कॉलेज माना जाता है।

पढ़ने में प्रारम्भ से ही निपुण रहे गुरुदास बनर्जी ने स्कोटिश चर्च कॉलेज, प्रेसीडेन्सी कॉलेज तथा कलकत्ता विश्वविद्यालय से उच्च शिक्षा प्राप्त

की। गणित विषय लेकर एम.ए. में स्वर्ण पदक प्राप्त किया। गुरुदास बनर्जी की माता बहुत ही पारम्परिक विचारों की महिला थी, प्रतिदिन गंगा में स्नान करने जाना उनकी दिनचर्या में सम्मिलित था। जब माँ बूढ़ी हो गई तथा गंगा स्नान को जाने के योग्य नहीं रही तो गुरुदास बनर्जी प्रतिदिन गंगा से जल लाकर माँ के गंगा जल से स्नान की व्यवस्था किया करते थे। बड़े पद पर होने के बावजूद गुरुदास बनर्जी माँ की भावनाओं का पूरी तरह आदर करते थे। मृत्यु निकट आने पर माँ ने इच्छा प्रकट की कि उनके अन्तिम संस्कार में ईश्वरचन्द्र विद्यासागर को आमन्त्रित किया जावे। विधवा विवाह का समर्थन करके कारण ईश्वरचन्द्र विद्यासागर को कुलीन ब्राह्मण परिवारों का सम्मान प्राप्त नहीं था। सामाजिक कार्यक्रमों में उनको सम्मिलित नहीं किया था। गुरुदास ने माँ की इच्छा रखने हेतु ईश्वरचन्द्र विद्यासागर को बुलाया तथा वे शवयात्रा में सम्मिलित हुए।

व्यवसाय

शिक्षा पूर्णकर गुरुदास बनर्जी बहरामपुर कॉलेज में कानून विषय के प्राध्यापक हुए। कुछ समय बाद कलकत्ता हाईकोर्ट में वकालत करने लगे। 1876 में कानून विषय में डॉक्टरेट की उपाधि अर्जित की। 1878 में आप कलकत्ता विश्वविद्यालय में 'टैंगोर ला प्रोफेसर' नियुक्त हुए। प्रोफेसर के पद पर रहते आपने 'हिंदू विवाह कानून और स्त्रीधन' विषय पर व्याख्यान दिए। गुरुदास बनर्जी 1879 में कलकत्ता विश्वविद्यालय के 'फेलो' चुने गए। 1887 में बंगाल लेजिस्लेटिव कौंसिल के सदस्य बनाए गए। 1888 में आप कलकत्ता हाईकोर्ट के जज नियुक्त हुए। एक जनवरी 1890 से 31 दिसम्बर 1892 तक निरन्तर 3 वर्ष तक कलकत्ता विश्वविद्यालय के उपकुलपति रहे।

15 अगस्त का संबन्ध देश की आजादी के साथ-साथ शिक्षा की आजादी से भी है। भारत की शिक्षा व्यवस्था को मैकाले की कैद से मुक्त कराने के प्रयास का प्रारम्भ 15 अगस्त 1906 को हुआ था। उस दिन श्री अरविन्द के प्राचार्यत्व में, बंगाल राष्ट्रीय कॉलेज के रूप में, राष्ट्रीय शिक्षा व्यवस्था प्रारम्भ की गई थी। बंगाल राष्ट्रीय कॉलेज में पढ़ाने की स्वैच्छिक सेवाएँ देने वाले सतीशचन्द्र मुखर्जी, राधाकुमुद मुखोपाध्याय आदि के साथ गुरुदास बनर्जी का नाम भी प्रमुख है। गुरुदास बनर्जी बंगाल राष्ट्रीय कॉलेज में गणित पढ़ाते थे। नारकेलडांगा स्कूल भारत के प्राचीनतम स्कूलों में से एक है। राष्ट्रीय भावना से प्रेरित होकर श्री रखालचन्द्र घोष ने इसे अपने घर में अनौपचारिक स्कूल के रूप से प्रारम्भ किया था। नारकेलडांगा स्कूल को औपचारिक मान्यता दिलाने व माध्यमिक स्तर तक क्रमोनत करवाने का कार्य गुरुदास बनर्जी ने किया। सन् 1904 में गुरुदास बनर्जी ने सरकारी नौकरी से अवकाश ग्रहण किया। उसी वर्ष इनको नाइटहुड (सर) की उपाधि प्रदान की गई। आपने 'ए फ्यू थाट्स ऑन एजूकेशन' नामक ग्रंथ की रचना की। सन् 1902 में 'इंडियन यूनिवर्सिटीज कमीशन' का सदस्य बनाया गया।

सामाजिक कार्य

नारकेलडांगा स्कूल जिसे गुरुदास बनर्जी ने विकसित किया।

गुरुदास बनर्जी जब कलकत्ता विश्वविद्यालय के उपकुलपति थे तब आसुतोष मुखर्जी वहाँ गणित के होनहार विद्यार्थी थे। आसुतोष मुखर्जी विश्वविद्यालय में गणित शिक्षक का कार्य करने के साथ गणित में अनुसंधान कार्य करना चाहते थे। आसुतोष मुखर्जी को विश्वास था कि वे अपने अनुसंधान से भारत को विश्व स्तर पर मान्यता दिला सकेंगे। उपकुलपति के रूप में गुरुदास बनर्जी को भी आसुतोष मुखर्जी की क्षमता में कोई शंका नहीं थी। गुरुदास बनर्जी ने प्रयास किया कि कलकत्ता विश्वविद्यालय में एक ऐसा कोष स्थापित किया जाय जिसकी आय से आसुतोष मुखर्जी के लिए अनुसंधान प्राध्यापक का पद स्थापित किया जा सके। उस समय भारत में गणित अनुसंधान की बात कोई सोच भी नहीं सकता था। घटना को याद करते हुए आसुतोष मुखर्जी ने लिखा कि बहुत प्रयास के बाद भी उतने धन की व्यवस्था नहीं हो सकी कि उनको खर्च चलाने के लिए 4000 रुपए वार्षिक का वेतन दिया जा सके। मजबूर होकर आसुतोष मुखर्जी को आजीविका कमाने के लिए वकालात व्यवसाय अपनाना पड़ा। वकील के रूप में सफलता प्राप्त करने के बाद आसुतोष मुखर्जी कलकत्ता विश्वविद्यालय के उपकुलपति बने। गुरुदास बनर्जी के पद चिन्हों पर चलते हुए आसुतोष मुखर्जी ने भी राष्ट्रवादी शिक्षा को मजबूत करने के प्रयास किए। इस हेतु डाक्टर सी.वी.रमन, सर्वपल्ली राधाकृष्णन, प्रफुल्लचन्द्र राय, ब्रिजेन्द्रनाथ सील, सतेन्द्रनाथ बोस आदि प्रतिभाओं को ढूँढ़ ढूँढ़ कर कलकत्ता विश्वविद्यालय में शिक्षक रूप में लाया गया। श्रीनिवास रामानुजन की प्रतिभा की पहचान सबसे पहले आसुतोष मुखर्जी ने की थी। गुरुदास बनर्जी मातृभाषा में शिक्षा दी जाने के पक्ष में थे। बंगाली में शिक्षा देने के लिए गुरुदास बनर्जी ने जीवनभर प्रयास करते रहे।

स्मृति में हिन्दू कॉलेज कोलकता का भवन

जब आसुतोष मुखर्जी कलकत्ता विश्वविद्यालय के उपकुलपति थे तब अंग्रेजी विभाग में सर गुरुदास बनर्जी प्रोफेसर का पद सजृत किया गया है। कई ख्यातनाम शिक्षकों ने इस पद पर कार्य किया। दो महाविद्यालय भी गुरुदास बनर्जी के नाम पर हैं। भारत के शिक्षक श्री गुरुदास बनर्जी के अनुकरणीय जीवन से प्रेरणा ग्रहण कर, राष्ट्रहित की शिक्षा व्यवस्था को मजबूत कर सकते हैं।❑

(बाल साहित्य एवं विज्ञान विषयक लेखक)

धर्मरक्षक बलिदानी संत की वीर गाथा

पुस्तक – सवा लाख से एक लडाऊँ
लेखक – हनुमानसिंह राठौड
प्रकाशक – अ.भा.राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ
सहयोग राशि – 100 रु.
समीक्षक – उमेश कुमार चौरसिया

पुस्तक प्राप्ति केन्द्र

शैक्षिक महासंघ सदन

606/13, कृष्णा गली नं. 9, मौजपुर,
दिल्ली-110057, दूरभाष : 011-22914799

वीर प्रसूता भूमि भारत में अनेक ऐसे पराक्रमी वीर और संन्यासी योद्धा हुए हैं, जिन्होंने धर्म और मातृभूमि के सम्मान की रक्षार्थ अपना सर्वस्व न्योछावर कर दिया। मुगल आक्रान्ताओं से संघर्ष की एक लम्बी दास्तां इतिहास के पन्नों में दर्ज है। मुगलों के अत्याचारों से मुक्त कराने का संकल्प लेकर पंजाब प्रान्त से निकली ऐसी ही एक तूफानी लहर का नाम था- गुरु गोबिन्द सिंघ। अदम्य साहस, जीवट और आत्मविश्वास से भरपूर सिख गुरु गोबिन्द सिंघ जी ने 'खालसा' की स्थापना कर त्रस्त हिन्दू समाज को संगठित किया और मुगल आक्रांता औरंगजेब को ललकारा था। उन्होंने यह सिद्ध कर दिखाया कि गुरु का कार्य केवल धार्मिक उपदेश देना मात्र ही नहीं है वरन् आवश्यकता पड़ने पर धर्म की रक्षा के लिए शस्त्र उठाने का सामर्थ्य देना भी है। गुरु साहिब मानव-प्रेम को ही सच्ची भक्ति तथा उपासना मानते थे। उनकी लड़ाई किसी जाति, धर्म के विरुद्ध नहीं, वरन् कट्टरता, धर्मांधता व जबरन धर्मान्तरण के विरुद्ध थी। उनका सम्पूर्ण जीवन संघर्ष इसी भाव को लक्षित करता है। गुरु गोबिन्द सिंघ जी के 350वें प्रकाशोत्सव के पावन पर्व पर विभिन्न सामाजिक विषयों के अध्येयता हनुमानसिंह राठौड़ द्वारा रचित धर्म की रक्षा में अपने पुत्रों तक का बलिदान कर देने वाले बलिदानी संत की वीर गाथा 'सवा लाख से एक लड़ाऊँ' पुस्तक सद्य प्रकाशित हुई है।

गुरु गोबिन्द सिंघ जी को महान् तेजस्वी वीर की संज्ञा देते हुए स्वामी विवेकानन्द ने भी अपने प्रसिद्ध भाषण 'हिन्दू धर्म के सामान्य आधार' में उनका उल्लेख करते हुए कहा था-'स्मरण रहे, यदि तुम अपने देश का कल्याण चाहते हो तो तुममें से प्रत्येक को श्री गुरु गोबिन्द सिंघ का मार्ग अपनाना होगा।' वे अन्यत्र कहते हैं-'गुरु गोबिन्द सिंघ भारत के सबसे महान् प्रमुख पात्र ही नहीं, राष्ट्रभाव के प्रबल प्रतीक भी हैं।' वर्तमान संदर्भ में देखें तो शस्त्र उठाने की न सही लेकिन दृढ़ राष्ट्र निष्ठा के संकल्प की आज अत्यंत आवश्यकता है। देश-धर्म के हित में सर्वस्व समर्पण और सतत् संघर्ष के तेजस्वी आदर्श गुरु गोबिन्द सिंघ जी की गौरवगाथा का स्मरण कराना ही इस पुस्तक का उद्धेश्य भी है। गुरुगाथा के साथ-साथ गुरु तेगबहादुर, बाबा बंदासिंघ बहादुर जैसे शूरवीरों की कथा व प्रसंग भी इसमें शामिल हैं।

हालांकि यह पुस्तक प्राथमिक तौर पर जीवनी लगती है, किन्तु इसके ग्यारह अध्यायों में वर्णित गुरु गोबिन्द सिंघ जी की वीर गाथा को बड़े ही रोचक ढंग से उपन्यासात्मक रूप दिया गया है, और अधिकांशत: तो विविध प्रसंगों को नाटकीय संवादों के माध्यम से समझाया-बताया गया है। पढ़ते हुए ऐसा अहसास होता है मानो पाठक उस दृश्य को प्रत्यक्ष अपने सम्मुख देख रहा हो। कई प्रसंगों को आचार्य-शिष्य के रोचक वार्तालाप के द्वारा कहा गया है। बीच-बीच में मूल पंजाबी के 'सलोक' इस वीरगाथा में अद्भुत् लावण्य उत्पन्न करते हैं। प्रत्येक दूसरे-तीसरे पृष्ठ पर कथानुरूप सुन्दर, सार्थक व प्रभावी चित्रांकन पुस्तक के आकर्षण में तो अभिवृद्धि करता ही है, साथ ही पठनीयता हेतु जरूरी रोचकता को भी बढ़ाता है। सभी चित्र ऐसे बोलते चित्र हैं मानो वे अपनी कहानी स्वयं ही अभिव्यक्त कर रहे हों। हिन्दी व अंग्रेजी के 23 ग्रंथों से संदर्भ लेकर गहन शोध व अध्ययन के उपरान्त यह पुस्तक लिखने में लेखक ने अथाह परिश्रम किया है। यह परिश्रम व्यर्थ नहीं जाएगा, मुझे विश्वास है कि यह पुस्तक बच्चे, युवा और प्रोढ़ सभी पाठकों को रुचिपूर्ण लगेगी और इसे पढ़कर नयी पीढ़ी राष्ट्रभाव से सराबोर वह जोश प्राप्त कर सकेगी जिसे गुरु गोबिन्द सिंघ जी ने यूं कहा था -

'चिड़िया ते मैं बाज तुड़ाऊँ,
गिदड़ों को मैं शेर बनाऊँ।
सवा लाख से एक लड़ाऊँ,
तभै गोबिंद सिंघ नाम कहाऊँ।

(समीक्षक- उमेश कुमार चौरसिया
सह संपादक 'केन्द्र भारती', बी-104
राधा विहार, हरिभाऊ उपाध्याय नगर-
मुख्य, अजमेर-305004)

झारखण्ड प्रदेश उच्च शिक्षा संवर्ग की प्रान्तीय बैठक

अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ की झारखंड प्रदेश उच्च शिक्षा संवर्ग की बैठक 27 जून 2017 को निवारणपुर, राँची में डॉ. सुशील अंकन की अध्यक्षता में आयोजित की गई।

बैठक में विशेष रुप से राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के झारखंड प्रान्त के प्रान्त प्रचारक श्री रविशंकर उपस्थित रहे। उन्होंने बैठक को संबोधित करते हुए कहा कि पूरे देश में शिक्षा के प्रमुख संस्थानों में देश विरोधी गतिविधियाँ आये दिन हो रही हैं ऐसी विषम परिस्थितियों में राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ की प्रासंगिकता है एवं ऐसे राष्ट्र विरोधी घटना के विरुद्ध व्यापक जन जागरण अभियान के माध्यम से महासंघ रचनात्मक प्रयास करे। उन्होंने कहा कि अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ की स्थापना राष्ट्र हित में शिक्षा, शिक्षा हित में शिक्षक, शिक्षक हित में समाज की परिकल्पना के साथ की गई है आज हमें इसे झारखंड में प्रभावी संगठन बनाने की आवश्यकता है। उन्होंने शिक्षकों के विभिन्न समस्याओं के समाधान हेतु उचित स्थान पर बात कराने का आश्वासन दिया। उन्होंने छात्र-छात्राओं के बीच राष्ट्रभक्ति, नैतिकता, जीवन मूल्य सहित कई रचनात्मक एवं सकारात्मक गुणों के विकास करने में शिक्षक अपनी महत्ती भूमिका निभा सकते हैं क्योंकि गुरु का स्थान सर्वोच्च है ।

झारखंड प्रदेश के संयोजक (उच्च शिक्षा संवर्ग) डॉ. ब्रजेश कुमार ने बताया कि इस महत्त्वपूर्ण बैठक में कई निर्णय लिए गए हैं यथा झारखंड के सभी विश्वविद्यालय में सदस्यता अभियान 10 जुलाई से 25 जुलाई तक चलाया जाएगा। इसके लिए सदस्यता प्रमुख बनाए गये।

9 जुलाई से 15 जुलाई तक गुरुवंदन कार्यक्रम करने का भी निर्णय लिया गया। आगामी 29-30 जुलाई को नई दिल्ली में आयोजित राष्ट्रीय संगोष्ठी में पूरे झारखंड से 15 प्राध्यापक शामिल होंगे। अगस्त माह में प्रदेश अभ्यास वर्ग भी करने का निर्णय लिया गया।

शिक्षक समस्याओं पर विस्तार से चर्चा की गई जिसमें प्रमुख रूप से विश्वविद्यालय की स्वायत्तता बनी रहे, तदर्थ शिक्षक नियुक्ति पर रोक लगाने, प्रोन्नति, पद में एकरूपता, एजीपी, पीएचडी इंक्रिमेंट आदि शामिल है। इन समस्याओं के समाधान हेतु मुख्यमंत्री से मिलकर ज्ञापन देने का भी निर्णय लिया गया। बैठक में झारखंड के सभी विश्वविद्यालयों से प्रमुख शिक्षक कार्यकर्ता उपस्थित रहे।

विनोबा भावे विश्वविद्यालय इकाई का सम्मेलन हुआ आयोजित

अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ की विनोबा भावे विश्वविद्यालय इकाई के द्वारा 12 जून 2017 को एक दिवसीय संगोष्ठी सह कार्यकर्ता सम्मेलन का आयोजन विश्वविद्यालय के आर्यभट्ट सभागार, विज्ञान भवन, हजारी बाग में किया गया जिसकी अध्यक्षता विनोबा भावे विश्वविद्यालय इकाई के अध्यक्ष डॉ. प्रदीप कुमार सिंह ने की।

'गुणवत्ता पूर्ण शिक्षा एवं शिक्षक संघ की भूमिका' विषय पर आयोजित संगोष्ठी के प्रथम सत्र में मुख्य अतिथि विनोबा भावे विश्वविद्यालय के कुलपति डॉ. रमेश शरण ने अपने संबोधन में कहा कि शिक्षा में गुणवत्ता के लिए शिक्षक संघ काफी सकारात्मक भूमिका निभा सकता है आज आवश्यकता है शिक्षक समुदाय को केवल एकेडमिक कार्य में व्यस्त रहे अन्यथा गैर एकेडमिक कार्य में व्यस्त रहने से शिक्षा में गुणवत्ता लाने में कठिनाई होगी। उन्होंने कहा कि शिक्षक रिसर्च कार्य करे एवं आज के वैश्विक परिदृश्य में गुणवत्ता पूर्ण शिक्षा समय की आवश्यकता है।

संगोष्ठी के मुख्य वक्ता अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ के उच्च शिक्षा संवर्ग के प्रभारी श्री महेन्द्र कुमार ने कहा कि शैक्षिक महासंघ राष्ट्र एवं समाज के बीच संतुलन का प्रयास सामूहिक रूप से कर रहा है। उन्होंने शिक्षा में गुणवत्ता एवं जीवन मूल्यों पर विस्तार से चर्चा करते हुए कहा कि शिक्षक संघ अगर ठान ले तो सकारात्मक बदलाव लाने से कोई रोक नहीं सकता। उन्होंने भारतीय शिक्षा को युगानुकूल एवं विदेशी शिक्षा को स्वदेशानुकूल बनाने की वकालत की।

संगोष्ठी का विषय प्रवेश डॉ. प्रदीप कुमार सिंह ने किया। संचालन कार्यक्रम संयोजक डॉ. राजकुमार चौबे ने किया एवं धन्यवाद ज्ञापन महामंत्री डॉ. अजीत कुमार ने दिया।

द्वितीय सत्र में संगठनात्मक वृत्त निवेदन अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ के विश्वविद्यालय इकाई के अध्यक्ष डॉ. प्रदीप कुमार सिंह ने किया। एवं पुरानी इकाई को भंग करने की घोषणा किया ।

इसी सत्र में निर्वाचन अधिकारी एवं विनोबा भावे विश्वविद्यालय के सामाजिक विज्ञान के संकायाध्यक्ष डॉ. बालेश्वर प्रसाद सिंह ने नई कार्यकारिणी की घोषणा की।

जिसमें अध्यक्ष -डॉ. गोखुल नारायण दास, उपाध्यक्ष -डॉ. अनिल कुमार सिंह, डॉ. मनोज तिवारी, डॉ. विनय सिंह, डॉ. बलदेव राम, सचिव -डॉ. गोपाल शरण पाण्डेय, सह सचिव -डॉ. अनुपमा सिंह, डॉ. अखिलेश्वर दयाल सिंह, डॉ. नंद किशोर सिंह सुलभ, कोषाध्यक्ष -डॉ. जयप्रकाश रविदास, प्रवक्ता -डॉ. अविनाश कुमार, सह प्रवक्ता -डॉ सरवर अली, सह सचिव -डॉ. पूरन साह सहित 10 कार्यकारिणी सदस्य एवं 8 विशेष आमंत्रित सदस्य निर्वाचित किए गए। कार्यक्रम का समापन वंदे मातरम् से हुआ।

म.प्र. शिक्षक संघ के प्रान्तीय निर्वाचन भोपाल में सम्पन्न

म.प्र. शिक्षक संघ की प्रांतीय महासभा का आयोजन 25 जून 2017 को कमला नेहरू उ.मा.वि., टी. टी. नगर भोपाल में प्रात: 10 बजे से दो सत्रों में सम्पन्न हुआ।

प्रथम सत्र प्रांताध्यक्ष प्रदीप सिंह की अध्यक्षता, अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ क्षेत्र प्रमुख किशनलाल नाकडा व मिडिया प्रभारी विजय सिंह के विशेष आतिथ्य में माँ सरस्वती के पूजन अर्चन से प्रारम्भ हुआ। स्वागत एवं परिचय उपाध्यक्ष क्षत्रवीर राठौर ने किया। संगठन के उपवेशन में पुराने शिक्षक सदन को बेचकर नया कार्यालय बनाने हेतु ट्रस्ट गठन का अनुमोदन किया। प्रांतीय कोषाध्यक्ष लछीराम इंगले के द्वारा प्रस्तुत आय-व्यय, लाभ-हानि पत्रकों का अनुमोदन किया। उनके द्वारा प्रस्तुत आय व्यय के हिसाब किताब की सदन में खूब प्रशंसा हुई। लेखा परीक्षक की नियुक्ति का अनुमोदन किया। 6 व 7 जून से प्रारम्भ निर्वाचन प्रक्रिया के तहत प्रांतीय निर्वाचन अधिकारी देवकृष्ण व्यास ने नवनिर्वाचित पदाधिकारियों के निर्विरोध निर्वाचन की घोषणा की।

उपवेशन के दूसरे सत्र में स्कूल शिक्षा मंत्री कुँवर विजय शाह के मुख्य आतिथ्य , राष्ट्रीय संगठन मंत्री श्री महेंद्र कपूर की अध्यक्षता, विशेष अतिथि श्री शिव चौबे, खनिज निगम अध्यक्ष एवं श्री रमेशचन्द्र शर्मा कर्मचारी कल्याण समिति अध्यक्ष, पूर्व प्रान्ताध्यक्ष प्रदीप सिंह के आतिथ्य में नवनिर्वाचित प्रांताध्यक्ष लछीराम इंगले सहित प्रांतीय इकाई को कार्यक्रम के अध्यक्ष माननीय महेंद्र कपूर ने शपथ दिलाई। शिक्षा मंत्री माननीय विजय शाह ने प्रदेश में वर्ष 2016 में सर्वाधिक सदस्यता 3000 करने पर म.प्र. शिक्षक खरगोन के जिलाध्यक्ष बी.एन. सोनी को सम्मानित किया एवं प्रदेश में विभिन्न गतिविधियों में सक्रियता से कार्य करने वाले मुरैना जिलाध्यक्ष नरेश सिंह शिकरवार को भी सम्मानित किया। स्वागत भाषण देते हुए प्रांताध्यक्ष लछीराम इंगले ने शिक्षकों की कई वर्षों से लम्बित सहायक शिक्षक से शिक्षक पद पर पदोन्नति , सहायक शिक्षक, शिक्षक एवं प्रधानपाठक को समयमान वेतनमान सहित अध्यापकों का शिक्षा विभाग में संविलियन की माँग पुरजोर तरह से रखते हुए मंत्री जी से मंच से माँगों के निराकरण की घोषणा का निवेदन किया।

शिक्षामंत्री ने अपने उद्बोधन में शिक्षकों को राष्ट्र निर्माता का गौरव भान करने के लिए राष्ट्र निर्माता पट्टिका लगाने का आह्वान करते हुए संगठन की सभी माँगों का बहुत जल्द निराकरण का आश्वासन दिया गया। उन्होंने 1 से 19 जुलाई के बीच ऑनलाइन स्थानान्तरण करने, शिक्षकों, अध्यापकों की स्थानांतरण नीति शीघ्र जारी करने, युक्तियुक्तकरण में शिक्षक संघों के पदाधिकारियों को छूट देने की बात कही। कार्यक्रम को विशेष अतिथि श्री शिव चौबे ने अपने उद्बोधन में म.प्र. शिक्षक संघ की एकता व् उपस्थिति को सराहा। श्री रमेशचन्द्र शर्मा ने शिक्षकों की माँगों को वाजिब बताया एवं निराकरण का भरोसा दिलाया। राष्ट्रीय संगठन मंत्री माननीय महेंद्र कपूर ने सरकार को सरकारी स्कूलों के शिक्षकों की समस्याओं का निराकरण शीघ्र करने का आग्रह किया व शिक्षकों से कर्तव्य निष्ठा से बच्चों के सर्वांगीण विकास की ओर ध्यान देने का आह्वान किया। कार्यक्रम का सञ्चालन पूर्व महामन्त्री हिम्मत सिंह जैन ने किया। आभार प्रदर्शन नवनिर्वाचित महामन्त्री क्षत्रवीर सिंह राठौर द्वारा किया गया। इस अवसर पर सम्पूर्ण प्रदेश से जिले, ब्लॉक व तहसील के 600 कार्यकर्ता मौजूद रहे ।

राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ गुजरात प्रदेश बैठक सम्पन्न

राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ, गुजरात की प्रान्तीय बैठक सरदार पटेल सहकार भवन कर्णावती, गुजरात मे 26 जून 2017 सोमवार को अखिल भारतीय शैक्षिक महासंघ के राष्ट्रीय संगठन मंत्री माननीय महेन्द्र कपूर के मुख्य आतिथ्य एवं गुजरात प्रदेश अध्यक्ष घनश्याम भाई पटेल की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई।

बैठक में 31 अगस्त तक सदस्यता अभियान पूर्ण करने, 5 से 16 जुलाई के मध्य गुरु वंदन कार्यक्रम आयोजित करने एवं आगामी दिनों में विस्तारक योजना का निर्णय लिया गया।

प्रदेश अध्यक्ष घनश्याम भाई पटेल और महामंत्री रतु भाई ने शिक्षकों की समस्याओं पर बताया कि राजकीय शिक्षकों के अलावा अनुदानित शिक्षकों के बकाया सातवा वेतनमान लागू करवाने सहित शिक्षकों की समस्याओं के निमित्त गुजरात सरकार को ज्ञापन दिया जाएगा एवं शिक्षक हित में शिक्षामंत्रीजी को समस्याएँ अवगत कराकर समाधान का प्रयास किया जाएगा। प्रदेश संगठन मंत्री भाविन भाई भट्ट ने संभाग और विभाग संगठन मंत्री की कार्य पद्धति पर प्रकाश डालते हुए कार्य विस्तार पर बल दिया।

समारोप सत्र में राष्ट्रीय संगठन मंत्री माननीय महेन्द्र कपूर ने बताया कि संगठन कार्यकर्ताओं के पुरुषार्थ के सहारे चलता है सरकार की कृपा से नहीं चलता और संगठन में मजबूती प्रवास तथा प्रभावी कार्यक्रम से आती है। हमारा लक्ष्य प्रत्येक विद्यालय तक पहुचना है तथा आप भारत की भावी पीढ़ी के निर्माता है अत: आदर्श शिक्षक और आदर्श कार्यकर्ता की भूमिका में रहते हुए सतत कार्यकर्ताओं का निर्माण जरूरी है। बैठक में राष्ट्रीय सचिव श्री मोहन पुरोहित पूरे समय उपस्थित रहे।

गतिविधि

एनडीटीएफ ने दिल्ली सरकार की राजनीति का किया विरोध

दिल्ली विश्वविद्यालय के अन्तर्गत आने वाले 28 कॉलेजों में दिल्ली के विद्यार्थियों के लिए कोटा लागू करने का दिल्ली सरकार का कदम पूरी तरह से राजनीति से प्रेरित है। दिल्ली सरकार ने जिस तरह से विधानसभा में प्रस्ताव पारित कर यह प्रयास किया है उससे एक बार फिर से इन कॉलेजों को डीयू से अलग करने मंशा स्पष्ट हो रही है। दिल्ली के विद्यार्थियों को कोटे की राहत देने के नाम पर कहीं न कहीं इन कॉलेजों को किसी अन्य विश्वविद्यालय से सम्बद्धता दिलाने की दिशा में कदम बढ़ाया जा रहा है, जिसे दिल्ली विश्वविद्यालय शिक्षक संघ (डूटा) को समझना चाहिए और समय रहते दिल्ली की आम आदमी पार्टी के नेतृत्व वाली सरकार का विरोध करना चाहिए।

नेशनल डेमोक्रेटिक टीचर्स फ्रंट (एनडीटीएफ) का कहना है कि नए विश्वविद्यालय व एक साल में 20 नए कॉलेज खोलने के अपने चुनावी वादे को दिल्ली की सरकार में सत्तासीन आम आदमी पार्टी पूरा कर पाने में विफल रही है। यही वजह है कि दिल्ली सरकार अपनी कमी छिपाने के लिए यह हथकंडा अपना रही है। दिल्ली सरकार का यह प्रयास सीधे तौर पर अपनी नाकामी को छिपाने और दिल्ली विश्वविद्यालय के एक्ट जो कि राज्य स्तर पर कोटा निर्धारित करने की इजाजत नहीं देता है को आधार बना केंद्र सरकार को कोसने की एक नई साजिश है। दिल्ली सरकार की ओर से बढ़ाया गया यह कदम पूरी तरह से राजनीति से प्रेरित है। दिल्ली सरकार विधानसभा के माध्यम से पूरी तरह से लोगों को भ्रमित करने का प्रयास कर रही है।

जहाँ तक राज्य के स्तर पर लागू होने वाले कोटे की बात है तो दिल्ली विश्वविद्यालय में इस आधार पर आरक्षण की व्यवस्था ही नहीं है। दिल्ली विश्वविद्यालय संसद से पारित कानून के अनुसार चलता है और इससे जुड़े कॉलेज भी उसी कानून के अनुरूप कार्य करते हैं। विश्वविद्यालय में लागू नियम वहीं है जो कि देशभर में केंद्रीय विश्वविद्यालयों के लिए लागू है। केंद्रीय विश्वविद्यालय स्तर पर किसी भी राज्य में राज्य स्तर पर सीटें राज्य के विद्यार्थियों के लिए आरक्षित करने का प्रावधान ही नहीं है इसलिए डीयू में इस तरह का प्रयास पूरी तरह से नियमों के खिलाफ है और अनावश्यक केंद्र की ओर से लागू व्यवस्था से टकराव पैदा करने वाला है।

यह सर्वविदित है कि वर्ष 1997 में भाजपा सरकार ने ही डीयू एक्ट में संशोधन कर गुरु गोबिंद सिंह इंद्रप्रस्थ विश्वविद्यालय की शुरुआत की दिशा में कदम बढ़ाया था। इस विश्वविद्यालय को सरकारी सहायता प्राप्त व स्वपोषित संस्थानों को सम्बद्धता प्रदान करने का अधिकार दिया गया था। इस राज्य विश्वविद्यालय के अन्तर्गत आने वाले शिक्षण संस्थान मेडिकल, इंजीनियरिंग, कानून, शिक्षा व अन्य प्रोफेशनल व बीकॉम ऑनर्स सरीखे अन्य कई कोर्स उपलब्ध कराते है और यहाँ दिल्ली के विद्यार्थियों के लिए 85 प्रतिशत सीटें भी आरक्षित है। इस विश्वविद्यालय के अन्तर्गत आने वाले शिक्षण संस्थान में उपलब्ध कोर्स सेल्फ फाइनेंसिंग कोर्स है और करीब डेढ़ दशक से यहां शिक्षण कार्य जारी है। यदि दिल्ली सरकार को विद्यार्थियों की इतनी ही चिंता है तो इस विश्वविद्यालय के अन्तर्गत आईपी यूनिवर्सिटी एक्ट के तहत नए कोर्सेज की शुरुआत कर राहत का मार्ग प्रशस्त कर सकती है। लेकिन ऐसा न करते हुए डीयू एक्ट और केंद्र सरकार को अनावश्यक रूप से निशाना बनाने के उद्देश्य से डीयू के 28 कॉलेजों में आरक्षण लागू करने का स्वांग रचा गया है। यदि सरकार को दिल्ली के विद्यार्थियों की चिंता है तो उसे अपने चुनावी वादे पर अमल करते हुए जल्द 20 नए कॉलेज खोलने चाहिए और उन्हें आईपी यूनिवर्सिटी से संबद्धता प्रदान कर विद्यार्थियों के लिए उच्च शिक्षा का मार्ग प्रशस्त करने का अपना चुनावी वादा पूरा करना चाहिए।

शिक्षा के क्षेत्र में नवाचार के लिए राजस्थान से सीख लें अन्य राज्य -प्रकाश जावड़ेकर

केंद्रीय मानव संसाधन मंत्री प्रकाश जावड़ेकर ने सभी राज्यों को शिक्षा के क्षेत्र में नवाचार और गुणात्मक सुधार के लिए राजस्थान मॉडल को अपनाने की सलाह दी है।

नई दिल्ली के एनडीएमसी सभागार में राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद महासभा की 54 वीं बैठक में बोलते हुए जावड़ेकर ने राजस्थान सरकार द्वारा शिक्षा के क्षेत्र में किए गए नवाचारों की मुक्त कंठ से सराहना की। 27 जून 2017 को हुई इस बैठक में राजस्थान के शिक्षा राज्य मंत्री वासुदेव देवनानी मौजूद थे। उन्होंने जावड़ेकर के प्रति आभार जताया और कई उपयोगी सुझाव दिए।

जावड़ेकर ने राज्य की सभी 9985 ग्राम पंचायत स्तर पर पंचायत शिक्षा अधिकारी नियुक्त करने, सभी ग्राम पंचायतों में सीनियर सेकेंडरी स्कूल खोलने,18 हजार स्कूलों को छात्र टीचर अनुपात में मर्ज करने, स्टाफिंग पैटर्न को भी उसी अनुपात में लगाये जाने, बी एड टीचर्स की ट्रेनिंग को सरकारी स्कूल्स में अनिवार्य बनाने, प्री प्राइमरी स्कूलों के साथ 13 हजार आंगनवाड़ी केंद्रों को जोड़ने, सरकारी स्कूलों में पैरेंट टीचर्स मीटिंग्स की परंपरा शुरू करने आदि नवाचारों के लिए राजस्थान की भूरी भूरी प्रशंसा की।

बैठक में राजस्थान के शिक्षा राज्य मंत्री वासुदेव देवनानी ने एन.सी.ई.आर.टी. को राजस्थान की तरह टीचर्स के लिए आवासीय प्रशिक्षण शिविर का मॉड्यूल तैयार करवाने का सुझाव दिया। इसी प्रकार पाठ्यक्रमों में भी राजस्थान की तरह प्रधानमंत्री के स्वच्छता, कौशल विकास, जल स्वावलंबन आदि कार्यकमों की जोड़ने की सलाह भी दी।

राजस्थान विश्वविद्यालय एवं महाविद्यालय शिक्षक संघ (राष्ट्रीय)

प्रदेश विचार वर्ग अजमेर में हुआ आयोजित

रुक्टा (राष्ट्रीय) द्वारा महर्षि दयानंद विश्वविद्यालय, अजमेर में दिनांक 9 से 11 जून 2017 तक विचार-वर्ग आयोजित किया गया, जिसमें देश के जाने-माने विद्वानों ने राष्ट्रीय महत्त्व के विषयों पर कार्यकर्ताओं का युक्तियुक्त मार्गदर्शन किया। वर्ग में प्रदेश के सभी जिले से आए 270 कार्यकर्ताओं ने भाग लिया।

सर्वप्रथम दिनांक 9 जून को सायं परिचय-सत्र सम्पन्न हुआ। परिचय-सत्र में रुक्टा (राष्ट्रीय) के प्रदेश संगठन मंत्री डॉ. ग्यारसीलाल जाट ने वर्ग की प्रस्तावना पर विस्तार से प्रकाश डाला। उन्होंने कहा कि देश इस समय चुनौतियों से घिरा हुआ है और विघातक शक्तियाँ इसे अस्थिर करने पर आमादा है। इस परिस्थिति में यदि शिक्षक उठ खड़ा नहीं हुआ तो निश्चय ही हमें गंभीर संकटों का सामना करना पड़ेगा। हमारा शिक्षक तन-मन-धन से राष्ट्र की सेवा में स्वयं को पूर्णतया समर्पित करने को तैयार है, लेकिन यह समर्पण वह किस विधि-प्रविधि से कर सकता है इस पर चिंतन मनन करने हेतु ही इस विचार-वर्ग की आयोजना की गई।

दिनांक 10 जून को प्रात: उद्घाटन सत्र में शिक्षाविद् एवं चिंतक श्री हनुमानसिंह राठौड़ ने राष्ट्रीय विषयों पर समाज में उत्पन्न भ्रम की स्थिति का विवेचन करते हुए मजहब, मत, पंथ, संप्रदाय, रिलीजन व धर्म शब्दों के अर्थ में प्रचलित भ्रान्त धारणाओं का निराकरण किया एवं इनका यथार्थ तात्विक निहितार्थ प्रस्तुत किया। उन्होंने बताया कि भारतीय संस्कृति के अनुसार धर्म एक ही है और वह सनातन है। भारत के बाहर और भारत के भीतर भी धर्म का न तो कोई समानार्थी शब्द है और न ही इसे किसी परिभाषा में आबद्ध किया जा सकता है। धर्म का प्रकटीकरण केवल जीवन-मूल्यों से हो सकता है। सबसे निर्बल जो है उसकी उत्तरजीविता सुनिश्चित होना ही धर्म है।

उन्होंने कहा कि हम भारतीय ही है, जो शुभ-लाभ को धर्मानुकूल मानते हैं, न कि लाभ-शुभ को। यह सनातन धर्म ही है, जो जग को 'केवलाधी भवति केवलादी' जैसा आचरण का शाश्वत नियम देता है कि अकेला खाने वाला पापी होता है। आसुरी शक्तियों का यह स्वभाव होता है कि वे केवल और केवल अपना लाभ देखती है। इन शक्तियों के पास आचरण का कोई कल्याणकारी नियम नहीं होता, इसलिए उनका काम उस दर्शन का खण्डन करना ही रह जाता है, जो हमारे लोक-परलोक में हमारे कल्याण, हमारी मुक्ति की बात करता है।

दिनांक 10 जून को अपराह्न सम्पन्न हुए बौद्धिक सत्र में 'प्रज्ञा प्रवाह' के राष्ट्रीय संयोजक श्री जे. नंदकुमार ने कम्युनिज्म के इतिहास की पृष्ठभूमि रखते हुए, उसके बदलते स्वरूप, साहित्य एवं क्रियाकलापों के अनेक उदाहरण प्रस्तुत करते हुए देश को तोड़ने वाली ताकतों के विरुद्ध एकजुट होने का आह्वान किया। रात्रि सत्र में केरल में राष्ट्रवादी लोगों पर कम्यूनिस्टों द्वारा हो रहे अत्याचारों से संबंधित लघु फिल्में दिखाई गई। नंदकुमार जी ने वहाँ के भयावह वातावरण को बदलने के लिए सोशल मीडिया व अन्य बौद्धिक साधनों के प्रयोग में राष्ट्रीय विचार के शिक्षकों की भूमिका स्पष्ट की।

11 जून को प्रात: पैसिफिक यूनिवर्सिटी, उदयपुर के कुलपति प्रो. भगवती प्रकाश शर्मा ने 'नियो-कम्युनिज्म' शीर्षक के अंतर्गत प्रतिभागियों के समक्ष कम्युनिस्टों के वे सब आवरण उतार फैंके, जिनके पीछे अपना शरीर छुपाकर वे दुनिया में कम्युनिज्म को जीवित रखने की कोशिश कर रहे हैं। नए रूप में वे दिखावे के लिए खुले दिमाग का होने का अभिनय करते हैं, लेकिन भीतर से वे उतने ही बंद दिमाग के होते हैं, जितने अब तक होते आए हैं। वे नई-नई सामाजिक संस्थाएँ बनाते हैं और उनके नाम ऐसे रखते हैं, जैसे वे समाज में कोई सांस्कृतिक परिवर्तन करने जा रहे हो या इसके पीछे उनका कोई लोक-कल्याणकारी उद्देश्य हो। भोले-भाले लोग इनकी संस्थाओं, विशेषकर एनजीओ - जिन्हें विध्वंसक ताकतों द्वारा अच्छी आर्थिक सहायता मिलती है, से जुड़ जाते हैं। उन्होंने इस संबंध में जागरूक रहकर राष्ट्रहित में कार्य करने का आह्वान किया।

11 जून को अपराह्न सम्पन्न हुए समारोप सत्र में श्री जे. नंदकुमार ने विभिन्न दृष्टांतों के माध्यम से प्रतिपादित किया कि किसी के भी जीवन का सफल होना उसके जीवन का सार्थक होना नहीं है। सफल होना आपकी निजता तक सीमित होता है, जबकि सार्थक होना निजता से मुक्त होकर सभी के कल्याण की दिशा में आगे बढ़ना होता है।

उन्होंने कहा कि स्वरों का प्रयोग किये बिना कोई व्यंजनों से अर्थ प्रकट करने वाला वाक्य रच दे, यह हो नहीं सकता। जिस प्रकार स्वरों के बिना वाक्य विन्यास नहीं हो सकता, उसी प्रकार सत्कर्मों के बिना जीवन की रचना नहीं हो सकती।

हमारे देश के नाम 'भारत' का अर्थ ही हमें ज्ञान अथवा प्रकाश की दिशा में आगे बढ़ने की प्रेरणा देता है। वर्तमान कालखण्ड में प्रकाश की दिशा में आगे बढ़ने का यह स्पष्ट कारण हमारे समक्ष विद्यमान है कि देश इस समय बौद्धिक आतंकवाद का शिकार हो रहा है। हमें इससे मुक्त होना है। उन्होंने स्पष्ट किया कि मैटरियलिज्म और कैपटलिज्म, ये दोनों ही सिद्धांत यांत्रिकता पर आधारित हैं और व्यवहार में कभी सार्थक सिद्ध नहीं हो सकते। अगर उत्पादन ही इतिहास का आधार होता है, तो इतिहास में मूल्य रह ही नहीं जाते। इन दोनों ही सिद्धान्तों से ऊब चुकी दुनिया बड़ी आशा से भारत की ओर देख रही है। हमें, विशेषत: शिक्षक साथियों को, दुनिया का नेतृत्व करते हुए अत्यन्त संयम और कौशल से विश्व-कल्याण के लक्ष्य की सिद्धि करनी होगी।

विचार-वर्ग में इन चार आधारभूत व्याख्यानों के समय विद्वानों का प्रतिभागियों से फलदायी संवाद तो हुआ ही, इसके अतिरिक्त संवाद को अधिक सार्थक बनाने के लिए संगठन के तीनों संभागों - जयपुर, जोधपुर और चित्तौड़ की चक्रीय बैठकें भी सम्पन्न हुई। चक्रीय बैठकों में विद्वानों ने राष्ट्रवाद, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और वर्तमान में समाज के समक्ष चुनौतियाँ जैसे उद्वेलित करने वाले विषयों पर प्रतिभागियों से युक्तियुक्त संवाद किया।

वर्ग में अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ के अध्यक्ष डॉ. विमल प्रसाद अग्रवाल, महामंत्री प्रो. जगदीश प्रसाद सिंघल, संगठन मंत्री श्री महेन्द्र कपूर की विशेष उपस्थिति रही।

रुक्टा (राष्ट्रीय) की विस्तृत कार्यकारिणी बैठक सम्पन्न

रुक्टा (राष्ट्रीय) की विस्तृत कार्यकारिणी बैठक 9 जून 2017 को महर्षि दयानंद सरस्वती विश्वविद्यालय, अजमेर में संगठन अध्यक्ष डॉ. दिग्विजयसिंह की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई। सामूहिक सरस्वती वंदना के साथ बैठक का प्रारम्भ हुआ। सर्वप्रथम महामंत्री डॉ. नारायण लाल गुप्ता ने गत बैठक का कार्यवाही विवरण प्रस्तुत किया जिसे सर्वसम्मति से अनुमोदित किया गया। इसके बाद गत बैठक के पश्चात् संगठन की गतिविधियों एवं उपलब्धियों का ब्यौरा प्रस्तुत किया गया। 29 मार्च व 8 मई को उच्च शिक्षा मंत्री से भेंट की जानकारी देते हुए महामंत्री ने बताया कि विभिन्न शिक्षक समस्याओं पर विस्तार से शिक्षकों का पक्ष संगठन द्वारा रखा गया है तथा मंत्री जी द्वारा समाधान प्रक्रिया में तीव्रता लाने के निर्देश अधिकारियों को दिये गए हैं। सदन को यह भी जानकारी दी गई कि संगठन के प्रयासों से रिव्यू डीपीसी के आधार पर विभिन्न स्नातकोत्तर, स्नातक प्राचार्यों व उपप्राचार्यों की नियुक्ति हुई है। इसी प्रकार कुलपति पद की योग्यता हेतु विधानसभा में पारित एक्ट में संगठन की जागरुकता एवं प्रयासों के चलते कॉलेज प्रोफेसर शब्द जोड़ा गया है एवं रिक्त होने की दशा में कार्यभार शिक्षाविद् को देने का प्रावधान हुआ है। महामंत्री ने ये भी बताया कि मुख्यमंत्री ने पदनाम परिवर्तन के प्रारूप को मंजूरी दे दी है तथा महाविद्यालयों में 477 प्रोफेसर पदों हेतु वित्तीय स्वीकृति प्राप्त हो गई है।

इसके बाद सदस्यों द्वारा अन्य विभिन्न लम्बित शिक्षक समस्याओं को प्रस्तुत किया गया। महामंत्री ने समस्याओं से संबंधित संगठन के पास उपलब्ध जानकारी से सदस्यों को अवगत कराते हुए नवीन समस्याओं पर शिक्षकों का पक्ष शासन के समक्ष रखने का विश्वास दिलाया।

इसके पश्चात् अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ के महामंत्री श्री जे.पी. सिंघल ने महासंघ की गतिविधियों एवं उपलब्धियों की जानकारी दी। प्रो. सिंघल ने महासंघ के प्रतिनिधि मंडल की मानव संसाधन विकास मंत्री श्री प्रकाश जावडेकर हुई भेंट की विस्तृत जानकारी देते हुए बताया कि शिक्षा एवं शिक्षकों की विभिन्न समस्याओं के समाधान हेतु चरणबद्ध रूप से कार्य करने पर सहमति बनी है तथा इस हेतु जावडेकर जी ने बैठक में उपस्थित अधिकारियों को समुचित निर्देश प्रदान किए है। प्रो. सिंघल ने यह भी बताया कि यू.जी.सी. द्वारा स्वीकृत शोध जर्नल्स की सूची को महासंघ के प्रयासों से विस्तार दिया गया है। महासंघ का यह भी प्रयास है कि जर्नल्स की केटेगरी के अनुसार पॉइन्टस में कोई अंतर न रखा जाए।

बैठक के अगले सत्र में संगठन द्वारा परिसर संस्कृति के विकास पर गंभीर मंथन किया गया। बैठक में यह तथ्य उभर कर आए कि संगठन के कई कार्यकर्ता वैयक्तिक रूप से एवं अन्य शिक्षक साथियों को साथ लेकर अपने संस्थान के परिसर विकास में उत्तम कार्य कर रहे हैं। इनमें परिसर में ट्री गार्ड सहित पौधारोपण, कचरा पात्र लगाने, पुस्तकालय की पुस्तकों का रखरखाव, दीवारों का रंग-रोगन, जी.आई.एस. का विकास, प्लास्टिक मुक्त एवं पोस्टर मुक्त परिसर बनाने, गरीब बच्चों को वस्त्र वितरण करने, सौर पैनल लगवाने, पानी, कूलर व पंखे लगवाने, पूर्व छात्रों की सहायता से सभागृह व कक्षाओं का निर्माण, गार्डन में शिक्षकों के सहयोग से बेंच लगाने, विभिन्न विषयों में अतिरिक्त कक्षाएँ लगाने व नि:शुल्क कोचिंग व्यवस्था करने जैसे कार्य संगठन के कार्यकर्ताओं की सक्रियता से हुए हैं, संगठन मंत्री डॉ. ग्यारसीलाल जाट ने इस प्रकार के वैयक्तिक एवं सामूहिक प्रयासों को और अधिक मात्रा में करने की आवश्यकता जताते हुए संगठन के नाते **एक शिक्षक एक वृक्ष** अभियान लेने का प्रस्ताव रखा। इस प्रस्ताव को सदन ने सर्वसम्मति से स्वीकार करते हुए विभागश: लक्ष्य तय किये तथा अगले वर्ष इन वृक्षों का जन्म दिन मनाना तय किया।

इसके बाद सत्र 2017-18 के सदस्यता अभियान पर चर्चा हुई। यह तय किया गया कि पिछले वर्ष की भाँति इस वर्ष भी 1 जुलाई को अधिकतम सदस्यता दिवस व अभियान 15 जुलाई तक रहेगा। कार्यकारिणी ने यह भी सर्वसम्मति से निर्णय लिया कि वर्ष 2017-18 से उच्च शिक्षा के तकनीकी, संस्कृत व अन्य क्षेत्रों में भी सदस्यता प्रारम्भ की जाए। शैक्षिक मंथन पत्रिका की सदस्यता हेतु इस वर्ष शेष रहे अधिकतम शिक्षकों को आजीवन सदस्य बनाने का भी निर्णय लिया गया तथा विभागश: सदस्य बनाने हेतु कार्यकर्ताओं को जिम्मा दिया गया। सदन ने भारत सरकार द्वारा प्रो. जे. पी. सिंघल को प्रतिष्ठित पं. मदन मोहन मालवीय पुरस्कार से सम्मानित करने पर उनका करतल ध्वनि से अभिनंदन किया।

अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ के अध्यक्ष डॉ. विमल प्रसाद अग्रवाल ने अखिल भारतीय विस्तारक योजना की जानकारी देते हुए आह्वान किया कि संगठन के व्याप एवं कार्य के दृढ़ीकरण हेतु कार्यकर्ता का समय लगना बहुत आवश्यक है। उन्होंने कार्यकर्ताओं से 7 से 8 दिन तक अपने केन्द्र को छोड़कर अन्य स्थान पर विस्तारक निकलने का आह्वान करते हुए सामूहिक योजना बनाने की बात कही। संगठन अध्यक्ष डॉ. दिग्विजयसिंह ने व्यापक शिक्षा, शिक्षक एवं समाजहित में परस्पर भ्रातृभाव से कार्य करने का आह्वान किया।

अन्त में गत बैठक के पश्चात परम तत्व में लीन शिक्षक साथी मा. मुकुन्द राव जी कुलकर्णी, श्री पी. चन्द्रशेखर जी, प्रो. जे. पी. वर्मा, डॉ. ए. के. पाठक एवं डॉ. विद्यासागर शर्मा को श्रद्धांजलि दी गई एवं उनकी आत्मा की शांति हेतु प्रार्थना की गई। सामूहिक कल्याण मंत्र के साथ बैठक सम्पन्न हुई।

राजस्थान शिक्षक संघ (राष्ट्रीय) का प्रदेश महासमिति अधिवेशन

शिक्षा के क्षेत्र में मॉडल बनेगा राजस्थान - देवनानी

राजस्थान शिक्षक संघ (राष्ट्रीय) के प्रदेश महासमिति अधिवेशन में शिक्षा मंत्री श्री वासुदेव देवनानी ने कहा कि शैक्षिक परिवार के शिक्षक, विद्यार्थी, अभिभावक व प्रशासन चार पहिए हैं। शिक्षा का अर्थ केवल ज्ञान बाँटना ही नहीं है बल्कि विद्यार्थियों को अपने दायित्वों के प्रति जिम्मेदार बनाना है। वे फलोदी की राजकीय मॉडल स्कूल में राजस्थान शिक्षक संघ (राष्ट्रीय) के प्रदेश महासमिति अधिवेशन के उद्बोधन सत्र को बतौर मुख्य अतिथि संबोधित कर रहे थे। शिक्षा मंत्री देवनानी ने कहा कि सरकार राजस्थान राज्य को शिक्षा के क्षेत्र में पूरे देश में मॉडल के रूप में पहचान बनाने के पूर्ण प्रयास कर रही है। अधिवेशन में संघ के प्रदेशाध्यक्ष प्रहलाद शर्मा ने विभिन्न माँगें रखी तथा प्रदेश महामंत्री देवलाल गोचर ने प्रतिवेदन प्रस्तुत किया। कार्यक्रम में विधायक पब्बाराम विश्नोई, एबीवीपी पूर्व प्रदेशाध्यक्ष हेमन्त घोष, महन्त भगवानदास, लोहावट प्रधान भागीरथ बेनीवाल सहित विभिन्न शाखाओं, उपशाखाओं के पदाधिकारी एवं सम्पूर्ण राज्य से आये हुये प्रदेश महासमिति सदस्य उपस्थित रहे।

दो दिवसीय (20-21 मई 2017) प्रदेश महासमिति अधिवेशन के दूसरे दिन विभिन्न मुद्दों को लेकर खुली चर्चा व प्रदेश कार्यकारिणी चुनाव हुए। खुले सत्र में प्रदेशाध्यक्ष प्रहलाद शर्मा ने कहा कि शिक्षक संघ (राष्ट्रीय) शिक्षक हितों के साथ-साथ राष्ट्र को समर्पित पीढ़ी भी तैयार करता है। प्रदेश महामंत्री देवलाल गोचर ने कहा कि राज्य सरकार द्वारा संघ की माँगें पूरी नहीं किये जाने की स्थिति में सभी शिक्षक आन्दोलन के लिए तैयार रहें। प्रदेश मंत्री रवि आचार्य ने खुले सत्र का संचालन करते हुए शिक्षक समस्याओं का संकलन कर संगठन द्वारा इस सम्बन्ध में किये जा रहे प्रयासों की विस्तार से जानकारी दी, उन्होंने कार्यक्रम के संयोजक फलोदी के जिलाध्यक्ष अरुण व्यास को सफल आयोजन हेतु धन्यवाद भी ज्ञापित किया।

महासमिति अधिवेशन में संगठन की प्रदेश कार्यकारिणी के सभी पदों पर निर्विरोध निर्वाचन भी सम्पन्न हुए। जिसमें सभाध्यक्ष उमरावलाल वर्मा, उपसभाध्यक्ष देवीलाल पाटीदार एवं बसन्त जिन्दल, अध्यक्ष प्रहलाद शर्मा, वरिष्ठ उपाध्यक्ष अरविन्द व्यास, महिला उपाध्यक्ष जयमाला पानेरी, प्राथमिक शिक्षा क्षेत्र, माध्यमिक शिक्षा क्षेत्र, संस्कृत शिक्षा क्षेत्र के उपाध्यक्ष क्रमशः देवकीनन्दन सुमन, ओमप्रकाश शर्मा, जगदीश चौधरी तथा महामंत्री देवलाल गोचर, प्रदेश मंत्री रवि आचार्य, महिला मंत्री डॉ. अरुणा शर्मा व कोषाध्यक्ष अशोक कुमार शर्मा एवं सभी नौ संभागों के उपाध्यक्ष निर्वाचित हुये।

Teachers Federation calls on CEO Poonch

Teachers and masters of Poonch district under the aegis of All Jammu, Kashmir and Ladakh Teachers Federation, called on 17 June 2017 by the Chief Education Officer Poonch Arif Iqbal Malik who recently assumed his office at Poonch and apprised him about issues and problems being faced by them.

Teaching community of Poonch district led by Darshan Bharti, State Vice President and Mohinder Bali, District General Secretary met CEO Poonch with a delegatio to discussed the education scenario and the genuine problems being faced by the teaching community in Poonch district and assured the new CEO that the teaching community has a high hope with him that under his administration the department would flourish.

CEO Arif Iqbal Malik while speaking on the occasion shared his experience with the teachers and assured that he would work for the betterment of the system with the cooperation of the teaching community with dignity.

Federation leaders Dr. Dharminder Shastri, District Coordinator, Gurvinder Singh, Mohammad Tariq Chugtai, Ramesh Chander, Jeevan Parkash, Ravinder Dutta, Kusum Sharma, Mohammad Yousif and Chaman Sharma were also present on the occasion.

KRMSS Organise a round table discussion

Proposed varsity bill takes away autonomy of VCs'

This was the unanimous decision taken during a round table discussion of academicians, former members of syndicate, and elected representatives held at the BVB college 25 June, 2017. The discussion was organised by the Karnataka Rajya Mahavidyalaya Shaikshik Sangha (KRMSS).

The meeting, which was chaired by Leader of Opposition in Assembly Jagadish Shettar, discussed about the pres and cons of the proposed University Bill, which has been passed in the Assembly, and has got stuck in the Council.

The Participants said the proposed bill, 2017 is completely contradictory to the University Grants Commission's (UGC) model Act that speaks of giving more autonomy to the universities. However, the Bill proposed by the State government wishes to take away all the autonomy related to academics and administration, and repose it in the hands of IAS and KAS officials. The proposed bill also takes away the power of chancellor (governor) from his executive powers as the bill says that he should take decisions after consulting with government.

MLC Arun Shahapur, who represents Karnataka North West Teachers constitutency, charged that with implementation of this proposed bill, the state government will hold the key for administration of the University, while the vice chancellor (VC) will be just sitting in the post. "The Universities will become just another department of the State Government" he said.

Mr. Shahapur said, the new bill relegates VCs of the universities to second grade officials while the government will call the shots from the shoulders of Principal Secretary, who will be above the board.

The bill forces the VCs to consult with the government regarding every decision the VC wants to take which would both delay the process of development and reduce the powers of VCs to the lower level officials. be said.

The members unanimously said, the process of applying for the post of vice-chancellor is the root cause of all problems in the university system as the current appointment process is strongly stacked in favour of political interference.

They said, a national level pool of data base of eligible VCs should be formed and based on their academic credentials, the search committee should select a candidate for the post.

KRMSS member Raghu Akamanchi said, while the karnataka State Universities Act (KSUA), 2000, played a major role in diminishing the autonomy of VCs the 2017 Bill would put the final mail in the coffin of autonomy to universities.

The KSUA 1976 was more democratic and university Centric Act as it gave decision making taking to the semate and syndicate, which consisted of students, teaching staff and educational experts.

However now with the government appointing reluctant Revenue Department officials to the post of Registrar (evaluation) and Registrar (administration), the university system is hound to become weak.

23 varsities, one Act

The members also said, karnataka has 23 universities, However, the State government wishes to bring VTU, Vijaypur's Women University and others too under this proposed Act, which defies logic.

KLE Technological University Vice-Chancellor Ashok Sharma said most of the universities are in a mess because their autonomy has been snatched. Weaker the VCs, the greater disaster the universities are in besaid.

Include Odia, Sanskrit in Model College course

The Akhil Bhartiya Rashtriya Shaikshik Mahasangh (ABRSM) staged a dharna in front of the Raj Bhavan 28 June 2017 demanding inclusion of Odia, Sanskrit, History and Philosophy as optional subjects in the Model Degree Colleges in the State.

ABRSM eastern region head Dr. Narayan mohanty said that depriving Odia students of reading their glorious history, all-transcending literature and unparalleled philosophy would lead to the crippling of the Odia race in future.

The Odisha Government has established eight Model Degree Colleges in the State with three compulsory subjects and five optional subjects in which Odia, Sanskrit, History, Philosophy and have not been included as optional subjects.

The ABRSM demanded that the Government include these subjects in the courses of study at the earliest and also submitted a memorandum addressed to the Governor raising the issue.

Among others, ABRSM all-India Prabhari, Higher Education Mahendra Kumar was present.

शैक्षिक मंथन के 'गुरु रूठे नहीं ठौर' विशेषांक के
प्रकाशन पर हार्दिक शुभकामनाएँ

डी.पी.एम. कॉलेज सरसैना, भरतपुर

1. डीपीएम सीनियर सैकण्ड्री स्कूल
2. डीपीएम पी.जी. कॉलेज
3. डीपीएम बी.एड. कॉलेज
4. डीपीएम एस.टी.सी. कॉलेज
5. डीपीएम इन्टीग्रेटेड कोर्स सरसैना भरतपुर

प्रबन्धक
संतोष चौधरी
हन्तरा
मो. 9413918461

EXCELLENCE AND TALENT
SINCE 1965

APEX
GROUP OF INSTITUTIONS, JAIPUR

Approval/Affiliations: AICTE, New Delhi | **RTU,** Kota | **Univ. of Rajasthan,** Jaipur | **COA,** New Delhi | **BTER,** Jodhpur

Admissions Open 2017-18

M.Tech.
Power System | Thermal Engg.
Computer Science Engg.

B.Tech.
Electrical Engg. | Mechanical Engg.
Computer Science Engg.

Polytechnic Diploma
Civil | Electrical | Mechanical

MBA
Marketing | Finance | HR | IT

PGDM
Digital Marketing
Banking & Financial Services
Supply Chain Management
Health & Hospital Management

BBA

MCA | BCA

B. Arch

B. A.
B. Com.
B.Sc.
*Exclusively for girls

Apex Alumni spread All around the World

More than 90 Placement Drives in 2016-17

Additional Certification Training

8 Institutions | 47+ Acres of 24x7 Wi-Fi Campuses | 14 Programs | 600+ Experienced Faculty Members | 28000+ Alumni | 6800+ Students

• 5 Decades of Excellence in Academic, Technical & professional Education • Faculties from IIT, NIT, BITS Pilani & IIM • Campuses Spread over 50 Acres • Highly Effective Employability Training Programs • TCS Authorised Centre for Online Exam • 500+Engineering & Management Projects • Wi-Fi Campuses • Separate Boys & Girls Hostel

INDUSTRY CERTIFICATION, PLATFORMS & SOFTWARES

MetaStock · NISM · FPSB India · BSE · shopify · Google AdWords · SEOlytics · IIBF · NASSCOM · ORACLE

>> • Apex Institute of Engineering & Technology, Jaipur • Apex Institute of Management & Science, Jaipur • Apex Polytechnic Institute, Jaipur • Apex College for Girls, Jaipur • School of Architecture AGI Jaipur

>> **Call: 0141-6660999 • www.apexedu.org**

(Approved by AICTE & Rajasthan Technical University, Kota)
तमसो मा ज्योतिर्गमय
SHEKHAWATI GROUP OF INSTITUTIONS
शेखावाटी
website : www.sgisikar.org
इंस्टीट्यूट ऑफ इंजीनियरिंग एण्ड टेक्नोलोजी
Campus : Behind Circuit House, Jaipur Road, Sikar (Raj.)-332001 Helpline No: 9414039303, 9828390267, 7665010105
Our Motto... 360⁰ Development of Students
Best Technical Education Institute in the State of Rajasthan
17 Years of Excellence in Education
COURSES OFFERED
B.Tech.
Agriculture
Mining
Mechanical
Civil
Electrical
Computer Science
Information Technology
Electronics and Communication
OUR RECRUITERS
GENPACT
accenture
SUZUKI
TVS
HCL
ELITE
NIIT
Infosys
BAJAJ
REVA
Godrej
L&T
SMARTBRIDGE
IMSresearch
origin
SP&Co
YAMAHA
TATA
JINDAL
AVIVA
serco
HWB
Perfect Wellness
VINOVE
Justdial
MUNJAL SHOWA
MARKS & SPENCER
FUTURONIX
SILVEREYE
KLS KAIZEN
FUTURE GENERALI
HEAPRO
talbros
HDFC
SPAR Group
Reliance
and many more.....
165+ Companies
2100+ Placements
Ranked AA+
M.Tech.
Digital Communication
Machine Design
Power Systems
Computer Science

शैक्षिक मंथन के 'गुरु रूठे नहीं ठौर' विशेषांक के प्रकाशन पर हार्दिक शुभकामनाएँ

राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ, बनासकाठा जिला

रतु भाई गोल
प्रदेश महामंत्री

किशोर भाई परमार
मीडिया प्रकोष्ठ प्रमुख

विनोद भाई आर पटेल
जिला संगठन मंत्री

दाना भाई के परमार
जिला सह मंत्री

कोकिला बेन पंचाल
जिला महिला मंत्री

लोक शिक्षा | ॐ श्री गणेशाय नमः | लोक सेवा

Regd. No. 55/1998

राजस्थान सरकार से स्थाई मान्यता प्राप्त

महाराजा गंगासिंह विश्वविद्यालय, बीकानेर से सम्बद्धता प्राप्त

12वीं एवं स्नातक पास छात्र-छात्राओं हेतु-

एच.के. मून्दड़ा (पी.जी.) महाविद्यालय

ओरियन्टल बैंक के सामने, अनूपगढ़ रोड, नई मण्डी, घड़साना (श्रीगंगानगर)

1999 से क्षेत्र का पहला महाविद्यालय

रोजगार की दिशा में समर्पित संस्थान

B.sc. (मेडिकल/ नॉन मेडिकल)

B.C.A. (बैलचर ऑफ कम्प्यूटर एप्लीकेशन)

B.com (वोकेशनल)

B.A. (प्रायोगिक विषय उपलब्ध)

M.A.

श्री उमाशंकर मून्दड़ा
सचिव

श्रीमती अर्चना मून्दड़ा
निदेशक

पढ़ाई के साथ-साथ प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी

वैबसाईट

www.hkmundracollege.org

e-mail : hkmcollege@gmail.com

Ph.&Fax

01506-251515, (M) 94145-04389

डॉ. आर.जी. शर्मा
प्राचार्य

भारत सरकार एवं राजस्थान सरकार से मान्यता प्राप्त सर्वश्रेष्ठ पॉलिटेक्निक कॉलेज

शेखावाटी पॉलिटेक्निक कॉलेज
सीकर

प्रवेश के लिए सम्पर्क करें : 7665010108, 9929596208

इंजीनियरिंग के बिना दुनिया में प्रगति की कल्पना नहीं की जा सकती, इण्डस्ट्रीज को जरूरत है योग्य इंजीनियर्स/प्रोफेशनल्स की

शेखावाटी पॉलिटेक्निक कॉलेज का BTER टॉपर (4th Rank) छात्र शिवराम गुर्जर संस्थान के चैयरमैन इंजी. रणजीत सिंह के साथ

Branches Offered

- Civil
- Architect
- Electrical
- Electronics
- Mechanical
- Computer

पॉलिटेक्निक प्रथम वर्ष योग्यता-10वीं पास
पॉलिटेक्निक द्वितीय वर्ष योग्यता-12वीं Maths एवं ITI पास

पॉलिटेक्निक पास विद्यार्थी 12वीं के समकक्ष माना जायेगा एवं पॉलिटेक्निक पास करने के बाद B.Sc.-I Year या B.Tech-II Year में सीधा प्रवेश पा सकेगा।

उच्च स्तरीय शिक्षण प्रणाली

☞ प्रायोगिक कक्षाओं का विशेष आयोजन ☞ आन्तरिक परीक्षाओं द्वारा वर्षापरान्त मुल्यांकन ☞ विषय विशेषज्ञ प्राध्यापकों द्वारा अध्यापन

600+

अप्रेल 2017 तक 600 से अधिक विद्यार्थियों ने विभिन्न इण्डस्ट्रीज एवं संस्थानों में नौकरियाँ प्राप्त की।

विशेषज्ञों के अनुसार देश के योग्य इंजीनियर्स/प्रोफेशनल्स नहीं बना पा रहे हैं, अधिकांश विद्यार्थी केवल डिग्री प्राप्त कर रहें है।

हमारा उद्देश्य है योग्य इंजीनियर्स/प्रोफेशनल्स बनाना

अच्छे इंजीनियर्स/प्रोफेशनल्स बनने के लिए आवश्यक है।

- नवीनतम् एवं इण्डस्ट्रीज ओरिएन्टेड क्लासेज
- योग्य एवं अनुभवी शिक्षक हो जिन्हें अपने विषय के साथ इण्डस्ट्रीज का भी ज्ञान हो
- अच्छी लैब/वर्कशॉप हो
- उच्च नैतिक मूल्य हो

आखिर SPC ही क्यों ?

- नवीनतम एवं इण्डस्ट्री ओरिएन्टेड क्लासेज
- IIT's, NIT's एवं देश के प्रतिष्ठित विश्वविद्यालयों से फैकल्टी
- इण्डस्ट्रीज में प्रत्येक वर्ष में छात्रों की ट्रेनिंग
- देश-विदेश से रेगुलर ऑनलाईन क्लासेज
- मूल्य आधारित शिक्षा एवं ध्यान केन्द्र

भारत सरकार व राज्य सरकार द्वारा केन्द्र प्रवर्तित योजना (शिक्षक शिक्षा) अन्तर्गत क्रमोन्नत संस्थान

श्री अग्रसेन स्नातकोत्तर शिक्षा महाविद्यालय सी.टी.ई.

(नैक संस्थान से 'ए' ग्रेड एवं यू.जी.सी. की 2-एफ एवं 2-बी धारा में पंजीकृत)

केशव विद्यापीठ, जामडोली, जयपुर-302 031 (राज.)

दूरभाष : 0141-2680466 (कार्यालय), 0141-2681583 (प्राचार्य/फैक्स)

बेवसाइट : www.shriagrasenpgttcollegecte.com, ई-मेल : ctejamdoli@gmail.com

संस्था अन्तर्गत संचालित विभिन्न पाठ्यक्रम

- यू.जी.सी. द्वारा स्वीकृत एवं राज. वि.वि. से सम्बद्ध दीनदयाल उपाध्याय कौशल केन्द्र के इंटीरियर डेकोरेशन, बिल्डिंग कंस्ट्रक्शन में डिप्लोमा, डिग्री कोर्स (शिक्षण निःशुल्क यू.जी.सी. द्वारा, योग्यता : +1 2 उत्तीर्ण)
- एम.एड. द्वि–वर्षीय पाठ्यक्रम (राजस्थान वि.वि. से स्थाई सम्बद्ध)
- बी.एड. द्वि–वर्षीय पाठ्यक्रम (राजस्थान वि.वि. से स्थाई सम्बद्ध)
- बी.ए.–बी.एड. एवं बीएस.सी.–बी.एड. चार वर्षीय इंटीग्रेटेड पाठ्यक्रम (राज्य सरकार से सम्बद्ध)
- डी.एल.ई.डी. द्वि–वर्षीय पाठ्यक्रम (राज्य सरकार से सम्बद्ध)
- केन्द्र प्रवर्तित योजनान्तर्गत सृजित सी.टी.ई. संस्थान
- इग्नू अध्ययन केन्द्र (बी.एड., एम.एड., एम.ए. (शिक्षा) इत्यादि)

कौशल केन्द्र के प्रशिक्षणार्थियों के रोजगार हेतु कैम्पस प्लेसमेंट सुविधा

संस्था अन्तर्गत उपलब्ध सुविधाएँ

• छात्र एवं छात्राओं हेतु पृथक छात्रावास व्यवस्था • कम्प्यूटर प्रशिक्षण की सुविधा • पुस्तकालय सुविधा,• शैक्षिक तकनीकी प्रयोगशाला • मनोविज्ञान प्रयोगशाला, विज्ञान प्रयोगशाला • आर्ट एण्ड क्राफ्ट प्रयोगशाला • स्थापन्न प्रकोष्ठ, परामर्श प्रकोष्ठ, महिला प्रकोष्ठ • शोध एवं प्रकाशन • गणित एवं भाषा प्रयोगशाला • संस्कार केन्द्र

डॉ. बनवारी लाल नाटिया	डॉ. राजीव सक्सेना	डॉ. अशोक कुमार सिडाना
अध्यक्ष	मंत्री	प्राचार्य

मध्यप्रदेश शिक्षक संघ, खरगोन जिला

हमारे मार्गदर्शक, यशस्वी एवं कर्मठ माननीय लछीराम इंगले, खरगोन को म.प्र. शिक्षक संघ का प्रदेश अध्यक्ष निर्वाचित होने तथा प्रदेश इकाई के समस्त निर्वाचित पदाधिकारियों को कोटि कोटि

बधाई एवं शुभकामनाएँ

एवं

म.प्र. शिक्षक के समस्त वरिष्ठ मार्गदर्शक पदाधिकारियों एवं कार्यकर्ताओं का कोटिशः आभार

शुभेच्छु

सर्व श्री हीरालाल तिरोले, बाबुलाल राठौर, जगदीश भावसार, बी.एन. सोनी, रमेशचन्द्र पाटीदार, अम्बरीष भारद्वाज,राजेन्द्र शर्मा, निशिकांत लोमटे, कमलसिंह तंवर, मनीष तिवारी, दिलीप दुबे, सुलेमान पठान, रमेश दुबे पंढरी पंचोली, जयंतीलाल सोनी, राजेन्द्र पंवार, रामेश्वर जायसवाल, राजेन्द्र हिरवे, मूलचन्द जवरा, मानक पाटिल, भैरोसिंह मण्डलोई, मालती कुलमी, छाया ताम्रकर, उषा भार्गव, विजयलक्ष्मी दीक्षित, पुष्पा शर्मा, विश्वजीत कुशवाह, शिवराम पाटीदार, कड़वा पाटीदार, मोहन कुशवाह, छगनलाल पाटीदार, नरेंद्र चौहान, राजेन्द्रसिंह तंवर, अरुण यादव, गोपाल शर्मा, अमरसिंह दांगी, चरणजीत खन्ना, सुरेन्द्र जायसवाल, गोपाल आर्य, महेश सोनी, रामकिशन पाटिल, अरुण जोशी, अनिल अवस्थी, अमरसिंह मण्डलोई, सन्तोष सांग्रे, कमलसिंह गोयल, सन्तोष यादव, दिनेश पटेल, सुनील ताम्रकर, हेमेन्द्र मण्डलोई, महेश सैते सहित खरगोन जिला, ब्लॉक, तहसील इकाई के समस्त कार्यकर्ता।

पुण्य स्मरण स्व. बाबुलाल लाड़ने खरगोन